



परमात्मन् संदेश

अप्रैल

वर्ष ३ अंक ६

चैत्र

१९६३

२०२०

वर्ष ३ अङ्क ६
चैत्र २०१९
अप्रैल १९६३

परमानन्द संदेश

सचित्र आध्यामिक, धार्मिक मासिक

संस्थापक

श्री १०८सद्गुरु बाबा शारदाराम मुनिजी महाराज, श्रीतीर्थ रामटेकड़ी, पूना ।

सम्मान्य संरक्षक

महामण्डलेश्वर श्री स्वामी गंगेश्वरानन्दजी महाराज

संचालक

श्री अजित मेहता [बी० ई० सिविल]

सम्पादक—

आचार्य भद्रसेन

साधारण सदस्यों के लिये शुल्क

५) पांच रुपए वार्षिक

स्थायी सदस्यों के लिए

२५) पच्चीस रुपए ६ वर्षों तक

आजीवन सदस्यों के लिए

१५१) एक सौ इक्यावन रुपये

—*—

साधारण अंकोंका मूल्य—५० नये पैसे

पत्र-व्यवहार का पता :—

शारदा प्रतिष्ठान

सी० के० १५।५१ सुड़िया, बुलानाला

वाराणसी—१

विषय सूची—

विषय	पृष्ठ संख्या
१—आत्मसमर्पण	२
२—छोड़ूँ किसे पकड़ूँ किसे ?	३
३—निर्गुण महारामायण	५
४—बाबाजी का प्रवचन	९
५—रामकृष्ण परमहंस	१२
६—ॐकार और रामनामकी एकता	१४
७—श्री रामनामकी महिमा	१७
८—सिद्धिके मार्ग	१९
९—मानस सरस्वती	२२
१०—जीव परमानन्दसे क्यों हिचकता है	२६
११—पावन तीर्थ रामटेकड़ी	३०
१२—आत्म गुरुबन्दना	३३
१३—रोइये मत हँसिए	३५
१४—प्रश्नोत्तर	३८
१५—समाचार संचय	३९

आत्म समर्पण

यदग्ने स्यमहं त्व, त्वं वा धा स्या अहम् ।

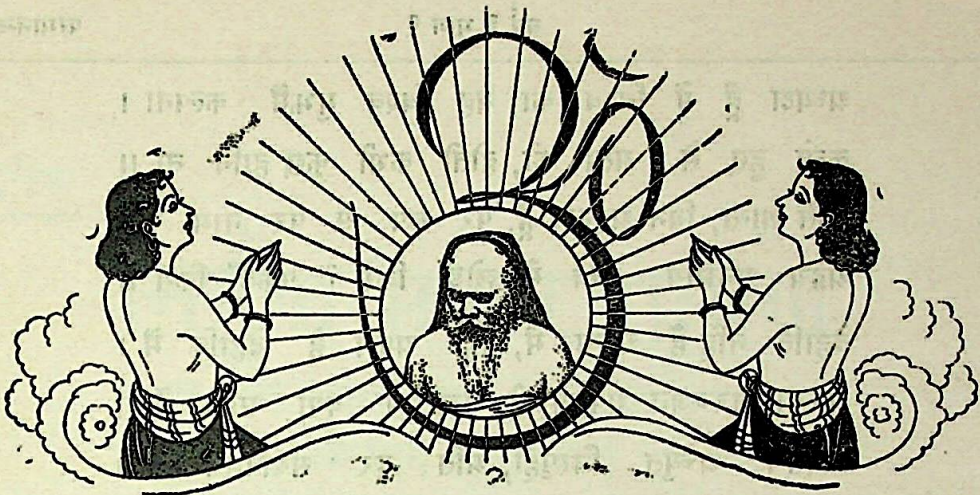
स्युष्टे सत्या इहाशिष ॥ ऋग्वेद ८।४४।३३ ॥

हे सकल ऐश्वर्यके दाता ! सुख विधाता ! तुम प्रकाश स्वरूप हो । जैसे सूर्यकी किरणों, अन्धकारको चीर कर अन्धेरी गुफाओं तकको प्रकाशित कर देती हैं, उसी प्रकार हे प्रकाशपुञ्ज ! अपनी जीवनदायी ज्ञानमयी किरणोंसे मेरे अन्तरात्माके अन्धकारको—काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकारको—भी हर लो । मेरा अन्तःकरण भी तेरे आलोकमें जगमगा उठे; तेरी दीप्तिमें मेरा मन कुछ इस तरह प्रकाशित हो उठे कि स्वयं प्रकाश पुञ्ज हो जाए ।

हे सहज कृपाल प्रभो ! पग पग पर ठोकरें खाकर, संसारके सुख ऐश्वर्यसे विरक्त हो तेरा उपासक तेरे शरणमें आया है—हे अशरण शरण ! मुझे अपनी शरणमें स्थान दो । आज मैं तुमसे कुछ माँगूंगा नहीं, मेरी भूख मिट चुकी है । अब तो केवल एक ही साध बाकी है, एक ही विनय है । मुझे सामर्थ्य दो, ऐसी अनुभूति दो कि हर वस्तुमें कण-कणमें तेरा ही स्वरूप देखूँ । कन्दमूलमें, फल फूलमें, पशु पक्षीमें तेरी ही भलक देखूँ । क्षितिज पर उड़ते इन श्यामल बादलोंमें, मन्द समीरके शीतल भोकोमें, पत्तों पर प्रतिबिम्बित सुनहले प्रकाशमें तेरी हो तो आभा है । उषाकी पहली किरण जब चुपकेसे आकर मेरी आँखोंको छू जाती है, तो शायद तेरा ही परमानन्द दायक संदेश मेरे हृदय तक पहुँचा देनेके लिये ! तब ऐसा लगता है जैसे तेरी स्नेह स्निग्ध दृष्टि इन अरुणिम रश्मियों द्वारा मेरी ही ओर लगी हुई है—और मेरा भक्ति रस प्लावित हृदय उमड़ पड़ता है तेरे चरण छू लेनेके लिए ।

हे मेरे आत्माके आत्मन ! अन्तरात्मन् ! मैं अपनेमें तुम्हें देखूँ—यही वरदान माँगता हूँ, महादानी ! यही वरदान मेरे लिये सर्वोत्कृष्ट ऐश्वर्य है । आज मैं अपना आपा, अपना सर्वस्व तेरे चरणोंमें अर्पण करता हूँ यही मेरी नैवेद्य है, मैं तुम्हारा अंश हूँ तुम्हींमें विलीन होना चाहता हूँ । प्रियतम ! मुझे अपने ही रंगमें रँग लो ।

रंग वाले देर क्या है मेरा चोला रंग दे । और सारे रंग धोकर रंग अपना रंग दे ॥
कितने ही रंगों से मैंने आज तक रंगा इसे । पर वे सारे फीके निकले तू ही गाढ़ा रंग दे ॥
तूने रंगी यह जमी और आसमाँ जिस रंग से । उसमें मेरा चोला भी ए रंगवाले रंग दे ॥
मैं तो जानूँगा तभी तेरी ये रंग अन्दाजियाँ । जितना धोऊँ उतना चमके जब तू ऐसा रंग दे ॥
जिस तरफ मैं देखता हूँ, रंग तेरा दीखता । मैं ही बस बेरंग हूँ, तू मुझको भी अब रंग दे ॥



ॐ जय सद्गुरु शारदाराम

परमानन्द संदेश

दुख खराडन परमानन्द मराडन, है इस पत्र का भाव ।
पढ़े सुने अमली बने, सो लख पावे प्रभाव ॥

वर्ष ३
अङ्क ६

वाराणसी अप्रैल संवत् २०१६ चैत्र १९६३ ई०

वार्षिक चन्दा
५) पाँच रुपये

छोड़ूँ किसे ? पकड़ूँ किसे ?

अक्षुब्ध मुझ अम्बाधि में ये विश्व नावें चल रहीं ।
मन वायु की प्रेरी हुई, मुझ सिन्धु में हलचल नहीं ॥
मन वायु से मैं हूँ परे, हिलता नहीं मन वायु से ।
कूटस्थ ध्रुव अक्षोभ हूँ छोड़ूँ किसे ? पकड़ूँ किसे ?
निस्सीम मुझ सुखसिन्धु में जग बोचियाँ उठतो रहें ।
बढ़ती रहें घटती रहें, बनती रहें मिटती रहें ॥
अव्यय, रहित उत्पत्ति से हूँ, वृद्धि से अरु अस्त से ।
निश्चल सदा ही एक-सा, छोड़ूँ किसे ? पकड़ूँ किसे ॥

अर्धक्ष हूँ मैं विश्व का, यह विश्व मुझमें कल्पना ।
 कल्पे हुए से सत्य की, होती कभी कुछ हानि ना ॥
 अति शान्त, बिन आकार हूँ, पर रूप से पर नाम से ।
 अद्वय अनामय तत्त्व मैं, छोड़ूँ किसे ? पकड़ूँ किसे ॥
 देहादि नहीं हैं आत्म में, नहीं आत्म है देहादि में ।
 आत्मा निरञ्जन एक-सा है, अन्त में क्या आदि में ॥
 निस्संग अच्युत निस्पृही, अति दूर सर्वोपाधि से ।
 सो आत्म अपना आप है, छोड़ूँ किसे ? पकड़ूँ किसे ॥
 चिन्मात्र मैं ही सत्य हूँ, यह विश्व बन्ध्यापुत्र है ।
 नहीं बाँझ सुत जनती कभी, तब विश्व कहने मात्र है ॥
 जब विश्व कुछ है ही नहीं, सम्बन्ध क्या फिर विश्व से ।
 सम्बन्ध ही जब है नहीं; छोड़ूँ किसे ? पकड़ूँ किसे ॥
 नहीं देह में, नहीं इन्द्रियाँ, मन भी नहीं, नहीं प्राण हूँ ।
 नहीं चित्त हूँ, नहीं बुद्धि हूँ, नहीं जीव, नहीं विज्ञान हूँ ॥
 कर्त्ता नहीं, भोक्ता नहीं, निमुक्त हूँ मैं कर्म से ।
 निरुपाधि संवित् शुद्ध हूँ, छोड़ूँ किसे ? पकड़ूँ किसे ॥
 है देह मुझमें दीखता, पर देह मुझमें है नहीं ।
 द्रष्टा कभी नहीं दृश्य से, परमार्थ से मिलता कहीं ॥
 नहीं त्याज्य हूँ, नहीं ग्राह्य हूँ, पर हूँ ग्रहण से त्याग से ।
 अक्षर परम आनन्दघन, छोड़ूँ किसे ? पकड़ूँ किसे ॥
 अज्ञान में रहते सभी, कर्त्तापना, भोक्तापना ।
 चिद्रूप मुझमें लेश भी, सम्भव नहीं है कल्पना ॥
 यों स्वात्म अनुसन्धान कर, छूटें चतुर भवबन्ध से ।
 भोला ! न अब संकोच कर, छोड़ूँ किसे ? पकड़ूँ किसे ॥

—श्री भोला बाबा

धारावाहिक

निर्गुण महारामायण

(राम रावण परमतत्त्व विचार—एक संक्षिप्त अध्ययन)

आचार्य भद्रसेन वैद्य

(गतांक से आगे)



श्री निर्गुण महारामायणके रचयिता सद्गुरु बाबा शारदारामजी मन रावणकी उत्पत्ति निरूपण करनेके बाद अब उसका स्वभाव वर्णन करते हुए उसको पहचानेकी कसौटी बतलाते हैं। जैसे कोयलके भुण्डमें छुपे हुए कौएको पहचानेके लिए उनके गुण-स्वभावके अन्तरको जानना आवश्यक है वैसे ही बाबाजी सुर दुर्लभ मानव शरीरमें छुपे हुए मनरावणकी पहचान बतला रहे हैं। रामचरित मानसमें गोस्वामीजी त्रेतायुगके राम-रावणका वर्णन किए हैं, यहाँ बाबाजी कलिके रावणका वर्णन, देखिए कितने भावपूर्ण उपमाके द्वारा कर रहे हैं। इसके अनुसार विवेकी जन संसारमें रावणका निर्णय सरलतासे कर सकते हैं—

मनकी उपमा आगे है, जैसी मनकी चाल।

मन ही रावण जानिए, जो चले चलन कुचाल ॥

बाबाजी कहते हैं—मनका गुण-स्वभाव उपमा देकर आगे बतलायेंगे, और इस मनकी जैसी चाल है वह भी कहेंगे। इस मनको ही रावण जानना चाहिए। यहाँ यह भी ध्वनि है कि जो मन नरककी ओर जाने वाले बुरे मार्गों पर चले और निन्दनीय कर्मोंको करे तथा कुकर्म द्वारा दूसरोंको पथभ्रष्ट करे ऐसे कुचाली चंचल मनको ही रावण जानना चाहिये।

लोक वेद वर्जित कर्म जो भाई ❀ न माने सो रावण दुखदाई ॥

मन कपटी अहंकारी जिसका होई ❀ कलिका रावण जानो सोई ॥

बाबाजीका दृष्टिकोण व्यक्ति समष्टि दोनों पक्षसे व्यापक है। रावणकी पहचान बतलाते हुए कहते हैं—संसारमें माता-पिता, आचार्य, गुरु, सद्गुरु, ऋषि-मुनि आदि आप्त पुरुषोंने जिन

कार्योंको न करनेके लिए कहा है और वेद शास्त्रने जिन कार्योंको मना किया है उन निषिद्ध कर्मोंको जो व्यक्ति अथवा जिस व्यक्तिका मन नहीं मानता है अर्थात् लोकमें स्थित गुरुजनों और वेद की आज्ञाका उल्लंघन करता है उसीको दुख देनेवाला रावण जानना चाहिए। दुखदाईका भाव यह है कि लोक-वेदमें मना किए हुए कर्मोंको न मानने वाला व्यक्ति समस्त संसारके लिये लंकापति रावणसे भी बढ़कर दुख देनेवाला है और पृथ्वी पर असह्य बोझ है। इसी मन रूपी रावणके कारण देहमें स्थित सभी देवता अत्यन्त पीड़ित रहते हैं।

बाबाजी आगे कहते हैं कि जिस व्यक्तिका मन कपटी और अहंकारी हो उसे ही कलियुगका रावण जानना चाहिए। भेद बुद्धि वालेको कपटी कहते हैं। ईश्वर जीवका भेद खड़ाकर भ्रम फैलाना, जीवोंका परस्पर भेद मानकर भय और संशय बढ़ाना आदि अनेक भेद पूर्ण कार्य करनेवालेको कपटी कहते हैं। सच्चिदानन्द शुद्ध ब्रह्मकी सत्य सत्ताको न मानकर अण्यस्त अर्थात् बालूमें मृगजलकी भाँति भासनेवाले मिथ्या संसारको सत्य मानना और दूसरोंसे भी मनवाना यही मनरावणका कपट है। मनुष्यको अपने कपट जालसे यह मनरावण पथभ्रष्ट करता है। श्रेय मार्गसे हटाकर प्रेयमें उलझा देना ही इस कपटीका स्वभाव है। तीनों कालमें असत्य वस्तुको सत्य बनाकर दिखाना ही इस मायावीका कपट है। लोकमें भी देखा गया है कपटी लोग अधीनता और नम्रता स्वीकार कर मृदुभाषीका स्वांग रच सज्जनोंको दुःख देते हैं, छल फरेबका जाल रचते हैं, शान्तिका हरण करते हैं।

देखिए, लंकापति रावणके कपटका वर्णन गोस्वामी तुलसीदासजी कितना सुन्दर कर रहे हैं—

अपने आगे किसीको भी कुछ न समझने वाला रावण स्वार्थ सिद्धिके लिए कपटयुक्त होकर कितना नम्र बनता है—

‘दस मुख गयउ जहाँ मारीचा । नाइ माथ स्वारथ रत नीचा ।

नवनि नीच कै अति दुखदाई । जिमि अंकुश धनु उरग बिलाई ।

भय दायक खल कै प्रिय बानी । जिमि अकालके कुसुम भवानी ।’

नम्रता प्रदर्शनके बाद अपना भाव कहता है—

होहु कपट मृग तुम्ह छलकारी । जेहि विधि हरि आनौ नृप नारी ।

... .. । तब मारीच कपट मृग भयऊ ।

इस प्रकार छल छद्मसे युक्त जिसका व्यवहार और स्वभाव हो उसे कलियुगका रावण जानना। यहीं पर बाबाजी एक और लक्षण बतलाते हैं—“अहंकारी” इस नाशवान जड़ शरीर में अहंता-ममता करके आत्मारामसे विमुख हो जाना ही अहंकार है। इस शरीरको ही “यह

मैं हूँ' ऐसा मान लेना अहंकार है। इस मांस पिण्डके शरीर और कल्पित बुद्धिमें अभिमान करके अपनेको कर्ता भोक्ता मानना ही अहंकार है यही संसार बन्धनका प्रमुख कारण है—

श्री शंकराचार्यने इस अहंकारकी निन्दा करते हुए कहा है—

सन्त्यन्यो प्रतिबन्धाः पुंसः संसार हेतवो दृष्टाः ।

तेषामेकं मूलं प्रथम विकारो भवत्यहङ्कारः ॥

पुरुषको इस संसार बन्धनकी प्राप्तिके कारण रूप और भी अनेक प्रतिबन्ध हैं; किन्तु उन सबका मूल प्रथम विकार अहंकार ही है क्योंकि अन्य समस्त विकारों और अनात्म भावोंका प्रादुर्भाव इसीसे होता है।

गर्वसे सदा 'मैं मैं' 'मेरा मेरा' कहनेवाला देहाभिमानी अहंकारी है। ऐसा व्यक्ति परमात्माका द्वेषी होता है, संतोंका वैरी होता है तथा सत्य, अहिंसा, दया क्षमा आदि दैवी गुणोंसे रहित होता है। जो व्यक्ति परमात्माका इतना द्वेषी हो कि रावण और हिरण्यकश्यपकी भांति 'राम'का नाम भी अहंकारके वशीभूत होकर न लेना चाहे उसे ही कलियुगका रावण मानना चाहिए।

भगवान् कृष्ण अहंकारीको अपना द्वेषी कहते हैं—

अहंकार बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः ।

मामात्म पर देहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः ॥ गीता १६।१८

अहंकार, बल, घमण्ड, कामना और क्रोध आदिके परायण हुए एवं दूसरोंकी निन्दा करनेवाले पुरुष अपने और दूसरोंके शरीरमें स्थित मुक्त अन्तर्यामीसे द्वेष करनेवाले हैं।

बाबाजी कहते हैं कि जिस व्यक्तिका मन कपटी भेदयुक्त अहंकारी देहाभिमानी है, राम के नामसे द्वेष करनेवाला है लोक वेदकी आज्ञाको नहीं मानता है वही कलियुगका नास्तिक रावण है। ऐसा कुचाली कुकर्म मनरूपी रावण दुःख देनेवाला है। दूसरोंको भी दुःख देता है और स्वयं भी दुःख पाता है। निषिद्ध कर्म करनेवालेकी निन्दा करते हुए जगद्गुरु शंकराचार्यजी विवेक चूड़ामणिमें कहते हैं—

श्रुतिस्मृतिन्यायशतैर्निषिद्धे दृश्येऽत्र यः स्वात्ममतिं करोति ।

उपैति दुःखोपरि दुःखजातं निषिद्धकर्ता समलिम्बुचो यथा ॥

श्रुति, स्मृति और सैकड़ों युक्तियोंसे निषिद्ध हुए इस दृश्य देहादिमें जो आत्मबुद्धि अर्थात् देहाभिमान करता है वह निषिद्ध कर्म करनेवाले चोरके समान दुःख पर दुःख भोगता है।

उपयुक्त प्रकारसे बर्जित कर्मका करनेवाला अहंकारी व्यक्ति ही दुःखदाई रावण है और अन्तमें कुल समेत स्वयं भी दुःख उठाता है। यही मनरूपी रावण जीवकी शान्तिको कपटसे

हरण करनेके कारण चोरके समान लाञ्छित, दुःखी और दण्डनीय हो जाता है। बाबाजी महाराज और आगे इस कलिके रावणका स्वभाव बतलाते हुए कहते हैं—

कलिका रावण योंहि सुहाती * सदा बदनीति करे दिनराती ।

उस रावण का मुख है दोखी * ताको काल राहु जनु लेखी ॥

बाबाजी कहते हैं—कपटी, अहंकारी इस कलिके रावण मनको चौरासी लाख योनियोंमें भटकाने वाले निषिद्ध कर्म ही अच्छे लगते हैं। जैसे ज्वरके रोगीको कुपथ्य ही प्रिय लगता है वैसे ही यह मन रावण आत्मोन्नतिके श्रेय मार्गको छोड़कर पननकी ओर ले जाने वाले प्रेय मार्गको ही पसन्द करता है। एक भाव यह भी है कि भेद दृष्टि युक्त विपरीत बुद्धिवालेको अनीति ही सुहाता है। सुखाभासको ही शाश्वत सुख मानकर उसीमें प्रसन्न रहना यह कलिके रावणका स्वभाव है। जैसे उल्लूको प्रकाश नहीं बल्कि अन्धकार ही सुहाता है वैसे ही कलिके रावणको विषय भोगका कुमार्ग ही सुहाता है।

यह मन रावण अहंकारवश अपनेको ही सबका कर्ता भोक्ता मानकर हमेशा दिनरात बुरा व्यवहार करता रहता है। 'सदा' का भाव यह प्रतीत होता है कि जब तक मन रावणके अहंकारका नाश और मानमर्दन नहीं होता तब तक वह अपना दुव्यवहार नहीं छोड़ता है। दिनरात बदनीति करता है। इसीलिए इसे निशाचर भी कहा गया है। सभी नीति एवं शास्त्रोंको जानते हुए भी दिन भर अज्ञानीकी तरह कुकर्म करता है और रातको निद्राके वशीभूत हो जाने पर भी यह मन रावण शान्त नहीं बैठता; स्वप्न संसारमें भी दुराचरण करता रहता है। जाग्रत स्वप्न दोनों अवस्थाओंमें यह मन अपना व्यवहार करता रहता है। इसीलिए बाबाजीने 'सदा' कहनेके बाद भी दिनरात बदनीति करता है ऐसा कहा है। आज लोकमें प्रत्यक्ष है कि रावणके लक्षणोंसे युक्त मनवाला व्यक्ति दिनमें तो धर्म विरुद्ध आचरण करता ही है परन्तु रातमें भी विषय भोगमें रत होकर नीति विरुद्ध आचरण करता रहता है।

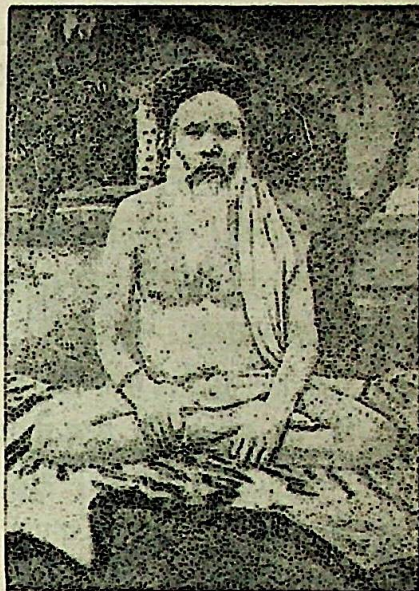
आगे बाबाजी कहते हैं—ऐसे रावणका मुख दोषी है अर्थात् मुख देखना पाप है। लोक व्यवहारमें भी लोग कहते हैं कि अमुक आदमी बहुत पापी है खल है उसका मुँह नहीं देखना चाहिए। अतः खलोंसे लोग सदा दूर रहते हैं और भगवानसे प्रार्थना करते हैं कि खलका सामना न हो ? क्यों ? इसीलिए कि उसका मुख दोषी है। "दोषी" का भाव यह है कि ऐसे लोग स्वभावसे ही कृतघ्न होते हैं। भलाई करने वालेके साथ भी बदनीति (बुराई) करना ही मनरावणके मुखका दोष है। क्योंकि तीन प्रकारके मनुष्य होते हैं। एक सन्त लोग होते हैं जो बुराई करनेवालेके साथ भी भलाई करते हैं। दूसरे जन साधारण होते हैं जो भलाई करनेवालेके

(शेष पृ० ३४ में देखिये)

सन्त बाणी

सद्गुरु बाबा शारदाराम
मुनि जी महाराजका

प्रवचन



ॐ

ॐ ब्रह्म को सिरनाय के, आत्म करो विचार ।

सदा सबहिं ॐ स्तुति, कर रहे वेद पुकार ॥

भाई, बहनो, सज्जनों ! पैतीस अक्षरी का विचार करते हुए आज चौथा सप्ताह है । पन्द्रह अक्षर हो गए हैं बीस बाकी हैं । आज भी पाच अक्षरों पर विचार करेंगे ।

टारन भ्रमन अधन की सैना । सतिगुर मुक्त पदारथ देना ॥ ठाकत दुविधा निरमल करणं । डारि सुधा मुख अपदा हरणं ॥ ढापत द्वैत अन्धेरी मन की । णासति गुर भ्रमता सब तन की ॥ टा, ठा, डा, ढा णा ॥

ये पाँच अक्षर हैं । महाराज उपदेश करते हैं कि हे जिज्ञासुओं ! जिसको ब्रह्म की इच्छा है वे सुधर्म पर चलें । मनुष्यों के लिए दो प्रकार का दल खड़ा है । एक आसुरी दल और दूसरा दैविक दल । आसुरी दल मनुष्यों को पाप की ओर ले जाता है, नीचता की ओर ले जाता है, चौरासी में घसीट ले

जाता है । दैविक दल ब्रह्मज्ञान की ओर ले जाता है, सद्मार्ग पर ले जाता है, मोक्ष की ओर ले जाता है । सद्गुरु जी कहते हैं कि पाप की सेना का नाश करो । नाश करने के वास्ते जो ज्ञानी लोग हैं वे युक्तियां बतावेंगे । लोगों को बतावेंगे कि आसुरी दल का कैसे नाश किया जाय ।

गीता में भी तो बताये हैं । एक दैविक धन और दूसरा आसुरी धन । इन शब्दों को चाहे जिसपर लगा लेवें । जैसे जो कर्म शास्त्रों के अनुसार है वह दैविक कर्म सत्कर्म हो गया और जो शास्त्रों द्वारा निन्दनीय है वह आसुरी कर्म हो गया । भगवान् गीता में वर्णन करते हैं कि मनुष्यों के तीन दुश्मन हैं । विचार करने से यह सिद्ध होता है । धर्म और अधर्म । अधर्म यह आसुरी है और धर्म कहने से

दैविक। तीन दुश्मन हैं—१. काम, २. क्रोध, ३. लोभ। तीनों में अधर्म का अर्थ भी है और सुधर्म का भी। पराई स्त्री को माता, बहन, बेटी की तरह समझना। अपनी स्त्री के साथ संतान की इच्छा से सम्भोग करना सुधर्म है, शास्त्रों में कहे अनुसार चलने से काम नहीं माना जाता। किसी प्रलोभन से विषय-वासना में रत रहना ही काम है और वह अधर्म है, मनुष्य का दुश्मन है। गुरु नानक देव जी ने येही तीन दुश्मन बताए हैं। ये दुश्मन आसुरी दल की सेना में हैं। उनको जीतना चाहिए। जो सतगुरु हैं वे इन दुश्मनों को जीतने का मार्ग बतलाते हैं। इनसे छुड़ा कर परम धाम का मार्ग बतलाते हैं और मुक्ति पद की प्राप्ति कराते हैं। मुक्ति क्या है? इसका कई बार वर्णन किया है, वैसे तो सब जीव मुक्त हैं। सब में ईश्वर का अंश है। सब में ज्योति स्वरूप विराज रहा है। ईश्वर तो सत्—चित्-आनंद है। लेकिन हम ईश्वर को भूल बैठे हैं। हम अपने आप को भूल बैठे हैं क्योंकि हमारे नेत्रों के सामने अज्ञानरूपी परदा पड़ा हुआ है जिसके कारण हम अपने स्वस्वरूप को जान नहीं पाते। हम अपने आप को शेर की तरह गधा समझा बैठे हैं। एक दृष्टांत याद आ गया है। एक बार एक जमींदार अपने खेत में से धान कटवा रहा था। वह किसानों से बोला कि धान जन्दी से काटो संध्या आती है। उसी समय वहाँ एक शेर आ रहा था। उसने जमींदार के ये शब्द सुने। सुनकर सोचने लगा कि संध्या तो कोई हम से भी

बलवान् है? तभी लोग उसके आने से डरते हैं। उसके दिल में बैठ गया कि संध्या हमसे बलवान् है। जब रात हो गई तो एक धोबी अपना गधा ढूँढ़ते-ढूँढ़ते उसी स्थान पर आया और शेर को ही अपना गधा समझ कर उसका कान पकड़ कर घर की तरफ चल दिया। शेर ने समझा यही संध्या है। उसके साथ चुप-चाप चला गया। धोबी ने जाकर उसे खूँटे में बाँध दिया। सुबह उस पर कपड़े लाद कर घाट की तरफ ले चला। मार्ग में एक दूसरा शेर मिला उसने पहले शेर से कहा “अरे तुम क्या कर रहे हो?” पहला शेर बोला—“चुप रहो, पीछे संध्या आती है।” दूसरा शेर पहले से बोला—“अरे मूर्ख तुम शेर हो और वह मनुष्य है। तुम अपने स्वरूप को भूल गया है। तुम जरा एक आवाज तो करो।” सुनकर शेर ने जोर से आवाज किया है। आवाज करने से शेर अपने स्वभाव में आ गया और अपने उपर की लादी फेंक दिया है। शेर की आवाज सुनकर धोबी भाग गया।

हम ब्रह्म हैं लेकिन हम पर काम-वासना की लादी लदी हुई है। इतना धन कमाया है कि लोभ-चिन्ता में पड़कर हम गधे बने हुए हैं। सतगुरु रूपी कोई शेर मिल जाने से वह अपने स्वस्वरूप का ज्ञान करा देते हैं। ज्ञान करा देने से अपने स्वस्वरूप को जान लेता है। नरसिंह, कबीर आदि सन्त लोग दूसरों को उपदेश करके उनको सुखरूप का बोध

कराकर मुक्त कर दिए हैं। सतगुरु मनुष्यों को अज्ञान में से निकाल देते हैं।

आगे महाराज लिखते हैं कि मनुष्य को दुविधा पड़ा है कि ईश्वर है या नहीं, भक्ति करें या ना करें, निर्गुण को जपें या सर्गुण को। इस दुविधा से भी सद्गुरु निवृत्त कर देते हैं। सद्मार्ग पर चलाते हैं। द्वैत की ये बातें मनुष्यों को ठग रहीं हैं। जिसमें ईश्वर के प्रति श्रद्धा विश्वास नहीं है, जिनका अंतःकरण शुद्ध नहीं है, उनके अन्तःकरण को सद्गुरु शुद्ध कर देते हैं। और सुधा रूपी अमृत वाणी से बोलना सिखाते हैं। गुरु अपने शिष्यों को उपदेश करते हैं और जो आपदा है, दुख, रोग को आपदा बोला जाता है, उससे मुक्त करते हैं और दैविक धन की प्राप्ति कराते हैं। जो दैविक धन होता है वह मुक्ति का दाता है। और आपदा है वह विपत्ति है। उसे सतगुरु हरण कर लेते हैं। उसे ज्ञान रूपी अग्नि से जला देते हैं। भस्म कर देते हैं।

ढापत द्वैत अन्धेरी मन की :—

जो जीवों में द्वैतभाव बना हुआ है उसने जीव के ज्ञान को आच्छादित कर रखा है, ढक रखा है। जिस प्रकार सूरज के बिम्ब को बादल घेर लेते हैं इसी प्रकार जो मन में अज्ञान रूपी अन्धेरा है, उसने आत्मज्ञान को ढक रखा है। जब ज्ञान रूपी अग्नि प्रज्वलित होगी तो इस अज्ञान रूपी अंधेरे का नाश होगा। गीता में भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं कि जब अग्नि प्रज्वलित होती है तो सूखी लकड़ी के साथ

गीली भी जल जाती है। ब्रह्मज्ञान रूपी अग्नि के प्रज्वलित होने पर पाप-पुण्य दोनों भस्म होकर ब्रह्म-स्वरूप हो जाता है। जैसे आकाश मित्र नहीं उसी प्रकार आत्मा-परमात्मा भिन्न नहीं है। अज्ञान में अपने आप को जीव भिन्न मानता है। ज्ञान हो जाने से ब्रह्म जानने लगेगा। जब हम ब्रह्म को समझने लगेंगे, तब अपने आप को समझने लगेंगे। जब हम को ज्ञान हो जाएगा तब हमारा यह ज्ञान काम, क्रोध, लोभ आदि पाप, दुश्मनों का दाह कर देगा।

ब्रह्मज्ञान की मस्ती में कपड़ा फटा हुआ है तो भी कोई ग्लानि नहीं है। ब्रह्मज्ञान से अनमोल कपड़ा मिल गया है। बहिरंग के कपड़े का परवाह नहीं है। बहिरंग का परवाह नहीं है! जिसको असीम धन मिल गया है वह थोड़े से धन की इच्छा नहीं करेगा। जिसको सोने का पहाड़ मिल गया है, वह अगूंठी की इच्छा नहीं करेगा। इसी प्रकार कोई भी गौवाला एक ग्लास दूध की चोरी नहीं करेगा। जिसको ब्रह्मज्ञान हो गया वह दुष्कर्म नहीं करेगा। उसके तन मन का दूषण निकल गया। गुरु ने कृपा करके दूषण का नाश कर दिया।

इस प्रकार आज पाँच अक्षरों का वर्णन किया है। गुरु नानक, कबीर, दादू, गोंबिद सिंह सब कृष्ण भगवान की, राम जी की स्तुति किए हैं। दोनों में कोई फरक नहीं। यदि शिव जी की पूजा किया है तो विष्णु जी की भी पूजा हो गयी है। यदि विष्णु जी की पूजा किया है तो शिव जी की भी हो गयी है। यदि एक की पूजा करके दूसरे का विरोध

(शेष पृष्ठ १३ पर)

फाल्गुन शुक्ल तृतीया को जिनकी जयन्ती मनायी गई—

सन्त शिरोमणि श्री रामकृष्ण परमहंस

श्री रामकृष्ण परमहंस जी का नाम सम्पूर्ण विश्व में बड़े आदर के साथ लिया जाता है। आपही एक ऐसे भारतीय सन्त हैं जिनका जन्मोत्सव भारतवर्ष के अतिरिक्त योरोप और अमरीका के विभिन्न भागों में मनाया जाता है। आपका जन्म हुगली जिले के कामारपुकुर नामक एक छोटे से ग्राम में १७ फरवरी सन् १८३६ ई० को हुआ था। आपके माता-पिता बड़े ईश्वर प्रेमी धार्मिक और अध्यात्मिक विचारों वाले सनातनी ब्राह्मण थे। आपका बचपन का नाम गदाधर चट्टोपाध्याय था।

आपका बचपन असाधारण घटनाओं से परिपूर्ण रहा है। बाल्यकाल में ही आपको समाधि सिद्ध हो गई थी। पुस्तक की विद्या से अरुचि होने के कारण आपने ग्राइमरी में ही पाठशाला की पढ़ाई का अन्त कर दिया। अलौकिक व्यक्तित्व और असाधारण बुद्धि के कारण श्री गदाधर चट्टोपाध्याय के प्रति ग्राम-निवासियों की श्रद्धामक्ति दिन-प्रति-दिन बढ़ने लगी। अनपढ़ गदाधर के जिह्वा पर साक्षात् सरस्वती का वास था।

सन् ११५३ ई० में आप कलकत्ते चले आये। इस समय आप अपने बड़े भाई रामकुमार चटर्जी के साथ रहते थे। श्रीरामकुमारजी दक्षिणेश्वर मन्दिर के पुजारी थे। उन्हीं के

सहायक रूप में आपकी भो नियुक्ति हो गई। यहीं पर आपको तपस्या और साधना का प्रारम्भ हुआ। श्री स्वामी तोता पुरोजी से आपने सन्यास की दीक्षा ली। गुरु ने इनका नाम रामकृष्ण परमहंस रखा। बारह वर्ष की लम्बी अवधि तक आपने हिन्दूधर्म के विभिन्न अंगों की विधिवत साधना एवं प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त किया। आपके जीवन की प्रत्येक घटनाएँ असाधारण थीं। आप अवतारी सिद्ध पुरुष थे। आपने जनजीवन में जागृति पैदा कर जिस आध्यात्मिक क्रान्ति को जन्म दिया है वह इतिहास के पन्नों पर सृष्टि के अन्त तक अंकित रहेगी।

रामकृष्ण परमहंस के रूप में भगवान् ने अवतार लेकर संसार को प्रत्यक्ष यह दिखलाया था कि किस प्रकार सच्चा आत्मज्ञानी मनुष्य इन्द्रिय के विषयों से बहिर्मुख होकर परमानन्द में लीन रह सकता है। आपने क्रियात्मक रूप से यह सिद्ध करके दिखला दिया था कि आत्मा अमर है और ब्रह्मत्व को प्राप्त करने की सामर्थ्य रखता है। भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के अन्तस्तल में सैद्धान्तिक एकता दिखला कर आपने बतलाया कि समस्त धर्म-सम्प्रदाय एक नित्य सत्य की ओर ले जाने वाले विभिन्न मार्ग हैं। परमात्मा एक है किन्तु उसके रूप अनेक हैं। विभिन्न सम्प्रदाय उसकी पूजा अलग-अलग

नामों और रूपों से करते हैं। वह साकार भी है निराकार भी है, और दोनों से परे निर्गुण भी है। उसके नाम रूप होने पर भी वह अनाम और रूप रहित है।

श्रीरामकृष्ण परमहंस जी साम्प्रदायिकता और संकीर्णता से परे थे। इनका उद्देश्य था—परमात्मा को विश्व का माता-पिता सिद्ध करना उन्होंने स्त्रीत्व के आदर्श को जगदम्बा के पद पर प्रतिष्ठित किया था। अपनी स्त्री को वे मानवी रूप में जगदम्बा ही समझते थे और 'पोडशी देवी' कहकर उनकी पूजा करते थे। इस प्रकार अपने दम्पति जीवन से उन्होंने इस बिलासिता के युग में भी भौतिकता से परे अध्यात्मिक विवाह की सत्यता सिद्ध कर दी।

जीवन भर की कठिन तपश्चर्या साधना द्वारा प्राप्त अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियों का परमानन्द स्वरूप ज्योति पुञ्ज मानव जाति को देते हुए आपने बतलाया कि प्रत्येक विचार सीधे ईश्वर से प्राप्त होते हैं।

श्री रामकृष्ण परमहंस जी के अन्दर दैवी शक्ति का इतना बाहुल्य था कि स्पर्श करते ही पापी के चरित्र को सुधार कर उसके विचारों की काया पलट कर देते थे। वे दूसरों के पापों को अपने तेज द्वारा भस्म करके उसके अन्दर आत्मशक्ति प्रविष्ट कर पवित्र कर देते थे। ऐसी अलौकिक शक्ति सम्पन्न सन्त शिरोमणि ५० वर्षों तक अपनी माया का विस्तार करते हुए १६ अगस्त १८८६ को ब्रह्मा लीन हो गये।

पृ० ११ काल्म दो का शेष

किया है तो दोनों का विरोध हुआ है। इस पर एक कथा याद आ गयी है :—

एक बार रात्रि में शिव जी के स्वप्न में विष्णु जी मिले हैं अपने आभूषणों सहित। इसी रात विष्णु जी को भी स्वप्न में शिव जी अपने स्वरूप में जटाधारी, डमरु त्रिशूल पूरे आभूषणों सहित मिले।

जब दोनों निद्रा से उठे हैं तो विष्णुजी ने सोचा शिवजी याद किये हैं उनके पास चलना चाहिए इतना सोच कर लक्ष्मी जी को साथ ले कर कैलाश की तरफ चल दिए।

इधर शिवजी सोचे हैं कि विष्णु जी याद किए हैं उनके पास चलना चाहिए। शिवजी भी पार्वती जी को साथ लेकर बैकुण्ठ की तरफ चल दिए। दोनों मार्ग में ही मिल गए।

दोनों आलिंगन किये। और रात की स्वप्न गाथा सुनाये हैं। विष्णु जी शिवजी से बोले कि अब आप बैकुण्ठ में पधारें और शिवजी विष्णुजी से कैलाश में चलने को कहने लगे। अन्त में पार्वती जी मध्यस्था बनी। दोनों ने उनका निर्णय मानना स्वीकार किए। पार्वती जी ने निर्णय दिया—कि आप लोग तो सर्वज्ञ हैं। आप दोनों का आत्मा एक ही है। जो बैकुण्ठ है सो कैलाश है जो कैलाश है वही बैकुण्ठ है। सब एक ही है। सर्व व्यापक है। आप में कोई फरक नहीं। आप अपने-अपने स्थान पर जावें। आज पाँच अक्षरों का वणन किया जैसा बुद्धि में थोड़ा बहुत आवे प्रेमी जन उसका अमृत पान करें।

संग्रहकर्ता-सरदार शाह सलुजा।

ॐकार और राम नामकी एकता

बाबा महादेवदास जी

सर्व साधारण मनुष्यों की उपासना के लिये ऋषियों ने ॐकार का सारभूत तथा ईश्वर के सकल ऐश्वर्य का बोधक (राम नाम) भी बताया है। यह नाम सर्वलोक प्रसिद्ध है इसकी महिमा ॐकार के समान ही शास्त्रकारों ने वर्णन की है। यथा :—

“राम नाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः ।

रूपं तत्त्वमसेशचासौ वेदतत्त्वाधिकारिणः ॥

(म० रा०)

अर्थात्—राम नाम और ॐकार एक समान ही मोक्ष के दाता हैं और वेद (ज्ञान) के अधिकारी को ‘तत्त्वमसि’ महा वाक्य रूप है। ॐकार और रामनाम की समानता को अब युक्ति से स्पष्ट करके बतलाया जाता है।

ॐकार से ही सब संसार भर की (भाषा) वर्णमालाओं की उत्पत्ति हुई है। संस्कृत वर्णमाला में क, र्म् ये दो अक्षर बड़ी महिमा से युक्त हैं, इसका हेतु यह है कि इन दो अक्षरों की ॐकार के शिरोभाग में लिखने की रीति में उसके मस्तक पर ॐ ऐसा चिह्न लिखा जाता है, उसमें से आधे चन्द्रमा का ॐ समान भाग रेफ को दिखाता है और बिन्दु (अनुस्वार) मकार को दिखाता है। जल तुम्बिका न्यायेन “रेफस्यो-द्धर्व गमनम्” ऐसा संस्कृत व्याकरण का सूत्र है, उसका अर्थ—जैसे पानी के ऊपर तुम्बी

तैरती है वैसे ही ‘रेफ’ सब वर्णों के ऊपर रहता है और ‘मोनुःस्वारः’ यह पाणिनी का सूत्र है इससे मकार का ‘बिन्दु, (अनुस्वार) हो जाता है। इस कारण ॐ कार के ऊपर का ॐ ऐसा चिह्न का अर्थ ‘रम्’ हुआ। व्यंजन वर्ण का उच्चारण स्वर की सहायता के बिना नहीं हो सकता, इसी हेतु पाणिनी ह य व र ट् इत्यादि सूत्रों में ह-व इत्यादि प्रत्येक व्यंजन में अकार जोड़कर संस्कृत की वर्णमाला दिखाई है।

इसी प्रकार रम् इन दोनों व्यंजनों में भी आकार मिलाकर ‘राम’ ऐसा सर्व साधारण के उच्चारण करने योग्य तथा सर्वोपरि ‘तारक-मन्त्र’ निकलता है। यथा :—

“निर्वर्णं राम नामेदं केवलं च स्वराधिकम् ।

सर्वेषां मुकुटं छत्रं मकारो रेफ व्यंजनम् ॥”

“यन्नाम ससंगं शद्विवर्णौ नष्ट स्वरौ मूर्ध्नि-गतौ स्वराणाम् । तद्रामपादौ हृदय निधाय देही कथं नोर्ध्वगतिं प्रयाति । (म० रा० म०)

एकला राम नाम ही बड़ा अद्भुत मन्त्र है और यह सब स्वरों का स्वामी है, एक तो सब अक्षरों का मुकुट और दूसरा छत्र है।

“एकं छत्रं एकं मुकुटमणि, सब वरणन पर जोड । तुलसी रघुवर नाम के, वरण विराजत दोड ॥”

सारांश—जिस अक्षर के सिर पर ॐ चिह्न होगा उस अक्षर में अद्भुत मन्त्र शक्ति आ जाती है।

जैसे (लँ) यह पृथ्वी बीज (रँ) अग्नि बीज, (बँ) वरुण बीज, (यँ) वायु बीज इत्यादि मन्त्र शास्त्र में प्रसिद्ध अनेकों मन्त्र बीजों की उत्पत्ति कही है उन-उन मन्त्रों का जप करने से वे देवता प्रसन्न होकर अवश्य फल देते हैं जैसे 'बँ' इस बीज मन्त्र का जप करने से वरुण देवता ताप दूर करता है इत्यादि । जिस राम नाम के संसर्ग से दो अक्षर स्वर नष्ट होते ही स्वरो के सिर पर चढ़ जाते हैं तो ऐसे राम जी के पदों को हृदय में धारण करने से प्राणी उर्ध्वगति को क्यों नहीं पहुँचेगा । अर्थात् अवश्य ही परमगति को पायगा ।

यह रामनाम कर्मों को, मोहान्धकार को और त्रयतापों को नष्ट कर मनुष्य को भक्ति, ज्ञान और वैराग्य प्रदान करता है । यथा:—

“रकारोऽनल बीजं स्यात् ये सर्वेऽवदवाद्यः ।
कृत्वा मनोमलं सर्वं भस्म कर्म शुभाशुभम् ॥
आकारो भानु बीजस्यात् वेदशास्त्र प्रकाशकः ।
नाशयत्येवसोदीप्त्या हृदस्थमज्ञानजं तमः ॥
मकारश्चन्द्र बीजं स्याद्य दया परिपूर्णम् ।
त्रैतापं हरते नित्यं शीतलत्वं करोति च ॥”
वैराग्य हेतुः परमो रकारः कथ्येत बुधैः ।
आकारो ज्ञान हेतुश्च मकारो भक्ति हेतुकः ॥”

(म० रामायण)

अर्थात्—राम नाम में का रकार अग्नि का बीज है और उसका गुण यह है कि शुभाशुभ कर्मों को भस्म कर देता है और जो रकार में आकार है वह भानु कहिये सूर्य का बीज है इस कारण वह अज्ञानान्धकार को नष्ट करता है और मकार में चन्द्रमा

बीज (कारण) है वह तीन प्रकार के तापों को मिटाकर भक्त के अन्तःकरण को शान्त करता है तथा राम नाम में का रकार वैराग्य का हेतु है और अकार ज्ञान का हेतु है और मकार भक्ति का कारण है । इस प्रकार यह 'राम' नाम की महिमा शास्त्रों में वर्णित है ।

राम नाम की व्यापकता

जैसे :—अस्ति भाति प्रिय सच्चिदानन्द 'नाम' सब पदार्थों में व्यापक है वैसे ही 'राम नाम' चराचर विश्व में व्यापक है ।

इस त्रिपय को एक गणित के हिसाब से बतलाते हैं—'राम, यह दो अक्षर चराचर नाम रूप जगत में व्यापक है जैसे सूत्र-मणि के समान पोया हुआ है ।

प्रत्येक मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार फल की इच्छा होती है इस हेतु उसको अपने नाम के अक्षरों की संख्या में चार से गुणा करना चाहिए, उपर्युक्त-चार-पुरुषार्थ साधन के लिए शरीर, जीवात्मा, इन्द्रियाँ, प्राण और सूर्यादि देवता इन पाँचो को कारणों की सहायता लेनी पड़ती है; इन पाँच को और मिलाना चाहिये, फिर उपर्युक्त संख्या को द्विगुना करके नम, वायु, तेज, जल, क्षिति मन, बुद्धि और अहंकार ये आठ प्रकार की नाम रूपात्मक प्रकृति को विचार द्वारा दूर करके सत्य स्वरूप सबमें रमण करने वाले 'राम' को देखना होता है । इस हेतु उपर्युक्त संख्या में आठ का भाग देकर बाकी निकाली जाय तो दो ही शेष रहेंगे । वही (राम) यह

अक्षर सत्य हैं। इसका उदाहरण इस प्रकार देखो, जैसे 'यज्ञदत्त' इस नाम को ले लो इसके चार अक्षरों की संख्या को चार से गुणा द्वारा १६ करके पाँच और मिलाने पर २१ होते हैं; फिर इसको द्विगुना करके आठ का भाग देने पर दो ही शेष रहते हैं वही यह (राम) दो अक्षर शेष रहे इस रीति से चाहे जिस नाम के विषय में देख लो दो अक्षर (राम) नाम शेष निकलेंगे। इस विषय में महात्मा तुलसीदास जी का दोहा भी प्रसिद्ध है—

“नाम चतुर्गुण पंचयुत द्विगुणित वसुहृत शेष।
रम्यौ राम सव जगत में तुलसी यह प्रतिलेख।”

सारांश यह है कि जो मनुष्य सच्चिदानन्द स्वरूप राम-नाम रूपी दो अक्षरों को चराचर में व्यापक जानकर स्मरण करते हैं वह धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सकल पदार्थों को पाते हैं। कलियुग में इस नाम के बराबर और कोई तत्त्व नहीं है एक राम नाम ही तारक मन्त्र है यथा :—

“राम एव परंब्रह्म राम एव परंतपः।
राम एवं परं तत्त्वं श्रीरामो ब्रह्म तारकम्॥

“रामः सत्य परंब्रह्म रोमात्किञ्चिन् विद्यते॥”

“भूमौ, जले, नभसि देवनरा सुरेषु,
भूतेश देविसकलेषु चराचरेषु। पश्यन्ति
शुद्धमनसा खलुराम रूपं रामस्य वैश्रुवितलेषु
समुपासकाश्च॥”

“रामेतिवर्णद्वय मादरेण सदा स्मरत्युक्ति
मुपैतिजन्तु कलौयुगे कल्मषमानसा नामन्यत्र

धर्म खलुनाधिकारः॥” (महा० रामा०)

अर्थात् राम ही परब्रह्म है राम ही परंतप है राम ही परंतत्व है राम ही तारक मन्त्र है राम सच्चिदानन्द स्वरूप परब्रह्म है ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसमें राम न हो। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती ! राम के उपासक लोग पृथिवी तल पर 'राम' के स्वरूप को भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश, दैव, नर, असुर और सम्पूर्ण चराचर में प्राणियों को शुद्ध मनसे देखते हैं। 'राम' इन दो अक्षरों को आदर पूर्वक जपने से प्राणी मुक्ति पाता है। कलिकाल में पापी मनुष्यों को अन्य धर्म में अधिकार नहीं है “सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज” (गीता) किन्तु एक राम नाम ही पापों को मिटाने की परमौषधि है ऐसा प्रह्लादभक्त ने अपने पिता से कही है :—

“रामनाम जपतां कुतो भयं सर्व पाप
शमनैक भेषजम्। पश्यतात मम गात्रा
सन्निधौ पावकोऽपिसलिलायतऽधुना॥”

प्रह्लाद के पिता हिरण्यकशिपु ने अग्नि तप्त खम्भा से लिपटने को कहा। तब भक्त प्रह्लाद ने कहा कि हे पिता ! सब पापों को नाश करने की औषधि, ऐसा रामनाम जपने वालों को अग्नि से भय कहाँ है देखो मेरे शरीर के स्पर्श से अग्नि भी शीतल हो गई है।

श्री राम-नाम की महिमा

(ले०-जयकान्त झा)

भगवन्नाम के माहात्म्य का यथार्थ वर्णन तो स्वयं भगवान् भी नहीं कर सकते— 'राम न सकहिं नाम गुन गाई । फिर भी संक्षेप में ऐसा कहने में कोई अत्युक्ति नहीं कि सबसे बड़ा भाग्यवान् नाम जापक ही है—

‘राम-नाम गति, राम-नाम मति,
राम-नाम अनुरागी ।
हैं गये, हैं, जे होहिगे,
तेई गनियत त्रिभुवन बड़ भागी ॥

आज के युग के लिए तो राम-नाम के अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय ही नहीं—

नहिं कलि करम न भगति विवेक ।
राम-नाम अवलम्बन एक ।

श्री हरिनाम कीर्तन की महिमा आज भी प्रत्यक्ष है। यद्यपि हरिनाम कीर्तन के द्वारा पारलौकिक फल अवश्य मिलता है तथापि उसे आज हम अपनी आँखों से नहीं देख पाते हैं। परन्तु हरिनाम कीर्तन का फल प्रत्यक्ष भी देखने में आता है। इससे मनुष्यों को जीवनदान और अमरता प्राप्त हुई है। कल्पवृक्ष और अमृत की कथा हम लोग सुना करते हैं। ये दोनों ही स्वर्ग के पदार्थ हैं और देवताओं के विशेष उपकारक हैं किन्तु स्वर्गीय सुधा से नामामृत में अधिक विशेषता है। इसमें मुख्य बात यह

है कि यह स्वर्गलोक और मर्त्यलोक दोनों में समान रूप से व्यवहार में आता है। जैसे मर्त्यलोक के साधारण मनुष्य रामनामामृत का पानकर अपना जीवन धन्य करते हैं, वैसे ही देव राज इन्द्र, प्रजापति, ब्रह्मा और देवाधिदेव महादेव जी भी नाम सुधा का स्वाद लेते हैं। इनमें भूतभावन श्री शंकर जी ने तो बड़ी चतुराई के साथ श्रीराम-नाम को अपने साथ रक्खा है। वे इसका निरन्तर जप करते हैं। यहाँ तक कि इस मर्त्यलोक में भी अपनी अविनाशी काशीपुरी से मरनेवाले प्राणियों के कानों में तारक 'राम' मन्त्र का उपदेश करते हैं जिससे वे प्राणी अमर हो जाते हैं।

इस विशाल जगत में श्री राम-नाम के द्वारा असंख्य प्राणियों का अनन्त उपकार हो रहा है। महर्षियों का कहना है कि सकल आपत्तियों के हर्ता और सर्व सम्पत्तियों के दाता श्री राम-नाम को बार-बार प्रणाम है।

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ।
लोकाभिरामं श्री रामं भूयो-भूयो नमाम्यहम् ॥

श्री राम-नाम सकल पुरुषार्थों का साधन होते हुए भी स्वयं साध्य परम पुरुषार्थ भी है। इसलिए सिद्ध योगीन्द्र मुनीन्द्र भी भगवन्नाम का जपकर अभिमत फल प्राप्त करते हैं।

साधक नाम जपहिं लय लाये ।

होहिं सिद्ध अनिमादिक पाये ॥

पवनकुमार हनुमान जी ने श्री राम-नाम के जप के द्वारा नामी श्री रामजी को वश कर रक्खा था ।

सुमिरि पवनसुत पावन नाम् ।

अपने वस करि राखे राम् ॥

देवताओं के अमृत के लिए हमलोग उत्सुक रहते हैं । पर वे सोमपायी पुण्य-जीण होते ही मृत्युलोकको ढकेल दिये जाते हैं । उनका अमृतपान व्यर्थ हो जाता है, पर नामामृतके पान करनेवालोंकी स्वप्नमें भी मृत्यु नहीं होती—

“राम रामेति ये नित्यं जपन्ति मनुजा भुवि ।

तेषां मृत्यु भयादीनि न भवन्ति कदाचन ॥

रामनामकी ही कृपासे श्री गणेशजी सर्व प्रथम पूज्य हुए—

“महिमा जासु जान गनराज ।

प्रथम पूजिअत नाम प्रभाज ॥

आदि कवि, अतुल्य विद्वान् रामनामके प्रसादसे ही हुए—

जान आदि कवि नाम प्रतापू ।

भयउ शुद्ध करि उलटा जापू ॥

ध्रुव प्रह्लाद भी इसी के आराधक रहे—

“ध्रुव सगलानि जपेउ हरि नाऊँ ।

पायउ अचल अनूपम ठाऊँ ॥”

“नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसाद ।

भगत सिरोमनि मे प्रह्लाद ॥”

श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदासजी महाराजने

श्रीराम नामकी महिमाको एक पद्यमें इस प्रकार कहा है—

ब्रह्माम्भोधि समुद्भवं कलिमल प्रध्वंसनं चाव्ययं,
श्रीमच्छम्भुमुखेन्द्र सुन्दर वरे संशोभितं सर्वदा ।
संसारामय भेषजं सुखकरं श्री जानकी जीवनं,
धन्यास्तेकृतिनः पिवन्ति सततं श्रीरामनामामृतम् ॥

रामनामामृत वेदसागरसे प्रकट हुआ है, कलिके मलको समूल नष्ट करनेवाला है, शोभा सम्पन्न शम्भुके मुखचन्द्रमें सदा सुशोभित रहता है, संसार रोगका मधुर महौषध है तथा श्री जानकी जीके जीवनका एकमात्र संजीवन है । ऐसे रामनामामृतका निरन्तर पान करनेवाले कुशल पुरुष धन्य हैं ।

इतना ही नहीं, यह रामनाम परम रसायन अमृत है । इसीलिए महर्षियोंने भवरोगके रोगियोंके लिए एकमात्र यही उपाय बताया है कि—

“निरामयं राम रसायनं पिव ।”

अतः हम सभीको अपना जीवन रामनाम-मय बना लेना चाहिए ।

‘परमानन्द सन्देश’ का सदस्य बनाकर इसको स्थायी बनानेकी कृपा करें

सिद्धिके मार्ग

श्री अरविन्द घोष

ॐ

सन्तत सुजातीय ग्रन्थमें सिद्धिके चार मार्ग बतलाये गये हैं—शास्त्र, उत्साह, गुरु एवं काल या समय । सबसे पहले साधनाके मार्गमें अग्रसर होने वाले साधकके लिये निर्दिष्ट मार्गकी शिक्षाकी आवश्यकता है ।

उसके बाद उस निर्दिष्ट बतलाये हुए मार्ग पर चलनेका दृढ़ संकल्प होना चाहिये । उसके बाद दीक्षित करनेके लिये गुरुकी आवश्यकता होगी और फिर काल या समयकी ।

हमें साधनाके पथपर चलना है, हमने अपना सर्वस्व ईश्वरके चरणोंमें अर्पण कर दिया है, इसके स्मरणसे ही उत्साह मिलेगा । स्वयं भगवान श्रीकृष्णचन्द्र गुरु बनकर साधकको दीक्षित करेंगे । अब शेष रह गया काल । उसका तो अनन्त विस्तार तुम्हारे सन्मुख उपस्थित है ।

साधकको भ्रम होगा कि स्वयं भगवान गुरुका स्थान किस प्रकार ग्रहण करेंगे । पर ज्ञानका प्रकाश होने पर इसका पता आपसे आप लग जायगा । उस समय साधकको ज्ञात होगा कि उसके भीतर और बाहर प्रत्येक छोटी से छोटी घटनायें इस तरहसे बनाई गयी हैं जिससे उसकी योग साधना अनवरत रूपसे चलती रहे, अन्तरंग और बहिरंग संचालन इस

प्रकारसे नियोजित किया गया है जिससे एक अपना प्रभाव दूसरेपर डालकर उसे चलायमान करते हैं । ताकि तुममेंसे अपूर्णता निकल जाय और तुम पूर्ण हो जाओ । तुम्हारे हृदयमें असीम प्रेम भर गया है, एक महान ज्ञान तुम्हारे जीवनकी गतिको ऊपर उठाता चला जा रहा है । तुम्हें धैर्य नहीं छोड़ना चाहिये, चाहे कितना ही समय क्यों न लगे, अक्षमता और निराशा तुम्हारे मार्गमें बाधक बनकर खड़े हों, तब भी तुम अपने पथसे विचलित न होना । प्रमाद रहित आर्य-पुरुषोंकी भाँति अपनेको पूर्णतया भगवानके चरणोंमें समर्पण करके आनन्दलाभ करो ।

तुम्हारे सामने कालरूपी अगाध जलराशि अपना विस्तार फैलाये खड़ी है । उसमें तरंगों-पर-तरंगों उठ रही हैं जो धीरे-धीरे उसी अनन्त की ओर बढ़ रही हैं । तुम्हें इन्हीं तरङ्गों पर होकर चलना पड़ेगा । तुम जानते हो कि जीवनकी गतिका काल ही सबसे बड़ा सहायक है ।

तुम्हारे जीवनसे एक असाधारण कार्यका सम्पादन कराया जायगा । तुम्हारी मानवी प्रकृति एक दमसे बदल दी जायगी और उसे देव तुल्य बना दिया जायगा । पर इसके लिये न जाने

कितने वर्ष लगेंगे। पर इससे तुम्हें अधीर नहीं होना चाहिये।

इसके अतिरिक्त भी कई एक उपाय हैं, जो सहजमें और अति शीघ्र फल प्रदान कर सकते हैं। तुम स्वयं इस तरहके अनेकों कार्य खोजकर निकाल सकते हो जिनके निष्पादन करनेसे तुम्हें सन्तोष होगा। तुम्हें प्रत्येक क्षण इस बातका ज्ञान रहेगा कि तुम कुछ-न-कुछ उपयोगी काम कर रहे हो। प्राणायाम, आसन, क्रिया, जप आदिके करनेसे भी आत्माकी उन्नति हो सकती है। तुम सोचोगे मैंने आज इतने समय तक प्राणायाम किया, इतने प्रकारका आसन किया, हजारकी जगह आज लाखकी संख्यामें मन्त्रका जप किया। इस प्रकार क्रियामें उत्तरोत्तर वृद्धि देखकर मनको इस बातका सन्तोष होगा कि हमारी साधना निरन्तर उन्नतिके पथपर चल रही है। पर इस तरह तुम अहंकारको बढ़ा रहे हो। पर यदि तुमने आत्मसमर्पणका व्रत लिया है तो तुम्हें हर तरहसे इसीका हो जाना पड़ेगा। इसीमें दत्तचित्त होकर रहना पड़ेगा।

ऊपर हमने जिन क्रियाओंका वर्णन किया है वे मनुष्यकी रचना हैं। इनका निष्पादन करनेके लिये भगवानकी अनन्त शक्ति अनवरत रूपसे काम नहीं करती। मनुष्यके प्रयासकी सीमा है। वहाँ तक तो वह काम कर सकता है फिर उसके आगे वह नहीं बढ़ सकता। पर जिस योगीने आत्मसमर्पण कर दिया है उसके कार्यमें किसी तरहका आडम्बर नहीं है। उसकी साधनाके लिये एकान्तकी नितान्त आवश्यकता

है, कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि आत्मा सिद्धिके मार्ग पर बढ़ती चली जाती है और इन्द्रियोंको इसका पता तक नहीं चलता। कहीं तो इसकी गति अत्यन्त बेगवती गोचर होती है और कहीं एक दम रुक जाती है पर एक बार ही यह योग शक्तिके द्वारा योगफलसे विजयके उल्लासमें उस अपूर्व आदर्शको प्रकट कर देती है।

अपनी अभीष्ट सिद्धिके लिये, पूर्णयोगकी साधनाके लिये मनुष्य जो उपाय रचता है वह सर्वथा कृत्रिम है, मनुष्यकी बुद्धि वह सोना है जिसे खानोंसे खोजकर निकाला गया है। इसका संचालन निर्दिष्ट सीमाके भीतर ही होता है। इस कृत्रिम जलराशिमें जीवन नौका बिना किसी विघ्न-बाधाके एक ओरसे दूसरी ओर खेकर लाई जा सकती है, पर इसका मार्ग तथा स्थान निर्दिष्ट है। उस मार्ग और स्थानके अतिरिक्त इसे और कहीं नहीं ले जा सकते। पर आत्मसमर्पण योगका मार्ग अति विस्तृत, अगाध जलराशिकी भाँति है और इस अगाध जलराशिमें कोई मार्ग भी निर्दिष्ट नहीं है। तुम अपनी इच्छाके अनुसार कोई भी मार्ग ग्रहण कर सकते हो और किसी भी स्थानको पहुँच सकते हो।

इस आदि अन्तहीन अगाध सागरमें यात्रा करनेके लिये तुम्हें आवश्यकता है एक नौकाकी इसको चलानेके लिये पतवार और पालकी, दिशाओंका ज्ञान रखनेके लिये यन्त्रकी, प्रवृत्ति की और एक सुचतुर मस्तीहा की। इस यात्रामें

ब्रह्मविद्या तो तुम्हारी नौका है, विश्वासरूपी पतवारके द्वारा इसको चलाया जायगा, आत्मोत्सर्ग ही इसकी दिशाका ज्ञान करानेवाला अभ्यासयन्त्र है। उत्पन्न, रक्षा और संहार करनेवाली महाशक्ति ही तुम्हारी प्रवृत्ति है और स्वयं सच्चिदानन्द भगवान ही तुम्हारे नाविक हैं। पर उनकी स्वकीय कर्म पद्धति है। अपनी इच्छाके अनुसार वे जिस समय चाहेंगे किसी घटनाको घटित करा लेंगे। तुम्हें केवल अपने पथका ध्यान रखना होगा, समयकी सर्वाथा उपेक्षा करनी होगी।

पश्चिमी शिक्षा जो इस समय हमलोगोंमें प्रचलित है उसकी घोर विरोधिनी है। इस शिक्षाका यही फल है कि वह मनुष्यकी स्वतन्त्र बुद्धिको किसीके दबावमें नहीं रहने देती। इसका फल है कि यह मनको वही काम करनेके लिए प्रवृत्त करती है जो स्वयं मनुष्यकी बुद्धि की कल्पना है, उसीके अनुमानसे घटित तथा सिद्ध है। इसका कारण यह है कि इस शिक्षा प्रणालीके विधायकोंका दृढ़मत है कि बुद्धि चाहे कितनी ही अपरिपक्व क्यों न हो, विचार शक्तिसे यह कितना ही असमर्थ क्यों न हो, इस प्रकार स्वतन्त्र विचारसे एक-न-एक दिन यह बुद्धि अवश्य ही परिपक्व होकर पूर्णताको प्राप्त होगी। इस दशामें इससे साधक की रक्षाका एक ही उपाय है और वह यह है कि उसे शास्त्रोंमें अटल विश्वास और श्रद्धा होनी चाहिये, गुरु चरणोंमें अपनेको पूर्णतः समर्पित कर देना चाहिये। केवल मात्र यही इस अनर्थसे साधकको बचा सकता है।

वर्तमान कालमें एक विचित्र धारा बह निकली है। माया तथा अद्वैत सिद्धान्तकी, जो प्राचीन प्रचलित बातें हैं उनकी आलोचना वैज्ञानिक और दार्शनिक कसौटी पर रखकर की जाती है। इनमें अध्यात्म विज्ञानमें जो जितना ही पारदर्शी है वह उतना ही अधिक विद्वान समझा जाता है। पर साधकको सावधान रहना चाहिए। इस आदर्शका भूलकर भी अनुसरण नहीं करना चाहिये। क्योंकि इससे आत्माकी संकुचित हृदयताका पता लगता है। उस समय मनमें चित्र विचित्र अनेक तरहके प्रश्न उठेंगे। उन प्रश्नोंको हल करनेके लिए, उन शंकाओंका समाधान करनेके लिए, स्वर्थ अपना समय साधकको नष्ट नहीं करना चाहिये। विज्ञानमय स्थान द्वारा जिस दिन तुम्हें दिव्य ज्ञानकी प्राप्ति होगी उसी दिन तुम्हारे हृदयकी सारी आशंकायें और संशय दूर हो जायेंगे। पर हमारे कहनेका यह अभिप्राय नहीं है कि तत्त्व-विद्या या मनोविज्ञान की हमें आवश्यकता नहीं। इनकी भी आवश्यकता पड़ती है पर इनके लिये निर्दिष्ट स्थान हैं। परन्तु इन सबोंको अध्यात्म विज्ञान की दासी कहनेसे भी काम चल सकता है। समय-समय पर ये कर्मपथको निर्दिष्ट करनेमें सहायक अवश्य होती हैं, पर इनका सम्पूर्ण भाव अध्यात्म ज्ञानके अधीन है और उसीकी छायामें पलकर ये अपनी जड़ मजबूत करती हैं। ये सब बातें इसलिये केवल पाण्डित्य (शेष पृ० २५ में देखिये)

मानस सरस्वती

(गतांक से आगे)

श्री वेदान्तो जी

कह रिपि बधू मृदुवानी ।
नारि धर्म कछु व्याज बखानी ॥
मातु पिता आता हितकारी ।
मित प्रद सब सुनु राजकुमारी ॥
अमित दानि भर्ता वैदेही ।
अधम सो नारि जो सेवन तेही ॥
धीरज धर्म मित्र अरु नारी ।
आपद कालपरिखिअहिं चारी ॥
एकइ धर्म एक व्रतनेमा ।
काय बचन मन पति पद प्रेमा ॥
जग पतिव्रताचारि विधि अहही ।
वेद पुरान संत सब कहहीं ॥

पतिव्रता स्त्रियाँ चार प्रकारकी होती हैं
उत्तम पतिव्रताके अन्तःकरणमें मल विक्षेप
आवरण तीनों दोषोंका अभाव होता है और
उसकी दृष्टिमें पति परमेश्वरके अतिरिक्त समस्त
जड़-जङ्गम जगत तुच्छ माया मात्र है ।

मध्यम पतिव्रताका अन्तःकरण मल विक्षेप
से रहित परन्तु आवरणसे युक्त होता है और
मन इन्द्रिय सदैव उसके वशमें रहती हैं । कभी

चंचलताको प्राप्त नहीं होतीं । निष्कृष्ट तीसरी
कोटिकी पतिव्रता भी निष्पाप होती है, उसके
अन्तःकरणमें मल नहीं होता परन्तु विक्षेप
आवरणसे युक्त है । उसका मन कभी-कभी
चंचल होता है परन्तु वह लोक परलोक और
धर्म ईश्वरका विचार करके अपने मन इन्द्रियों
को कुमार्गमें कदापि नहीं जाने देती । अधम
चतुर्थ कोटिकी पतिव्रताका अन्तःकरण मल
विक्षेप आवरण तीनों दोषोंसे युक्त है परन्तु जैसे
छः माहका बालक बड़ोंके द्वारा अग्नि पकड़नेसे
बचाया जाता है उसी प्रकार वह अधम पतिव्रता
अपने बड़ोंकी निगरानीमें रहनेके कारण दण्डके
भयसे तथा अवसर न मिलनेसे पाप करनेसे
बच जाती है ।

जो स्त्रियाँ अपने पतिको धोखा देकर पर
पुरुषसे रति करती हैं वे रौरव नर्कमें सौ कल्प
तक निवास करती हैं और पाप क्षीण होनेपर
मृत्यु लोकमें जन्म लेती हैं और जवानी अवस्था
में विधवा हो जाती हैं तथा जबतक पति संयोग
रहता है तबतक पतिसे विरोध और कलह
रखती है ।

अतः समुद्रमें कूदकर पहाड़से गिरकर तथा
अग्निमें जलकर प्राण दे देना उत्तम है परन्तु
स्त्रीको पर पुरुषसे रति कदापि नहीं करना
चाहिए। अधम पतिव्रताको निकृष्ट और निकृष्ट
पतिव्रताको मध्यम और मध्यम पतिव्रताको
उत्तम पतिव्रता बनानेका प्रयत्न करना चाहिए।
हे उमा ! अनुसूयाके आश्रम से राम आगे
चलते हैं—

जहाँ जहाँ जाहिं देव रघुराया ।
करहिं मेघ तहाँ तहाँ नभ छाया ॥
पुनि आए जहाँ मुनि सरभंगा ।
सुन्दर अनुज जानकी संगी ॥
कह मुनि सुन रघुवीर कृपाला ।
शंकर मानस राज मराला ॥
तब लगि रहहु दीन हितलागी ।
जब लगि मिलौ तुम्हहि तनुत्यागी ॥
असकहि जोग अग्नि तनु जारा ।
राम कृपा बैकुण्ठ सिधारा ॥
ताते मुनि हरि लीन न भयऊ ।
प्रथमहि भेद भगति घर लयऊ ॥

राम राम कहते हुए शरीर छोड़नेसे दशरथ
को भी मोक्षकी प्राप्ति नहीं हुई स्वर्गकी
प्राप्ति हुई ।

ताते उमा मोक्ष नहीं पावा ।
दशरथ भेद भगति मन लावा ॥

तात्पर्य यह है कि कैवल्य मोक्षके लिए
भगवान् रामके पारमार्थिक निर्गुण सच्चिदानन्द
व्यापक स्वरूपकी अभेद भक्ति करनी होगी ।
हे उमा !

पुनि रघुनाथ चले वन आगे ।
मुनिवरवृन्द विपुल संग लागे ॥
मुनि अगस्तकरि शिष्य सुजाना ।
नाम सुतीक्ष्ण रति भगवाना ॥
मन क्रम वचन रामपद सेवक ।
सपनेहु आन भरोष न देवक ॥
परेउ लकुट इव चरनन्हि लागी ।
प्रेममगन मुनिवर बड़ भागी ॥
भुज विशाल गहि लिए उठाई ।
परम प्रीति राखे रघुराई ॥

तब मुनि हृदय धीर धरि, गहिपद बारहिं बार ।
निज आश्रम प्रभु आनि करि, पूजा विविध प्रकार ॥

कह मुनिप्रभु सुनु विनती मोरी ।
अस्तुति करौं कवन विधि तोरी ॥
जो कोसलपति राजिव नैना ।
करउ सो राम हृदय मम अयना ॥
अस अभिमान जाइ जनि भोरे ।
मैं सेवक रघुपति पति मोरे ॥
तुरत सुतीक्ष्ण गुरु पति गयऊ ।
करि दण्डवत कहत अस भयऊ ॥
नाथ कोशलाधीश कुमारा ।
आए मिलन जगत आधारा ॥
सुनत अगस्त तुरत उठि धाए ।
हरि विलोकि लोचनजल छाए ॥
सादर कुशल पूछि मुनि ज्ञानी ।
आसन वर बैठारे आनी ॥
पुनि करि बहु प्रकार प्रभु पूजा ।
मोहिं सम भाग्यवान नहिं दूजा ॥
ऊमरि तरु विशाल तब माया ।
फल ब्रह्माण्ड अनेक निकाया ॥

जीव चराचर जन्तु समाना ।
 भीतर बसहिं न जानहिं आना ॥
 ते फल भक्षक कठिन कराला ।
 तब भय डरत सदासोउ काला ॥
 ते तुम्ह सकल लोक पति साईं ।
 पूछेहु मोहिं मनुज की नाईं ॥
 यह वर माँगहु कृपा निकेता ।
 बसहु हृदय श्रीअनुज समेता ॥
 अविरल भगति विरति सतसंगा ।
 चरन सरोरुह प्रीति अभंगा ॥
 जद्यपि ब्रह्म अखण्ड अनन्ता ।
 अनुभव गम्य भजहिंजेहि संता ॥
 अस तव रूप बखानउँ जानउँ ।
 फिरि फिरिसगुनब्रह्म रति मानउँ ॥

तात्पर्य यह है कि स्वप्नवत ब्रह्माण्डोंकी संख्या नहीं असंख्य हैं परन्तु सबका कालसे अन्त हो जाता है। केवल सर्वाधिष्ठान सर्वात्मा सच्चिदानन्द राम ही अनन्त हैं। राम भिन्न सर्व स्वप्नवत मिथ्या है। हे उमा ! वहाँ से भगवान राम पंचवटीमें आकर निवास करने लगे। वहाँ पर एक समय लक्ष्मणजी और भगवान रामके बीचमें बड़े मार्मिक लोक हितार्थ प्रश्नोत्तर हुए। उनको तुम्हें सुनाता हूँ मन लगाकर सुनो।

एक बार प्रभु सुख आसीना ।
 लक्ष्मिन वचन कहे बलहीना ॥
 सुरनर मुनि सचराचर साईं ।
 मैं पूछउँ निज प्रभु की नाईं ॥

मोहि समुझाई कहहु सोइ देवा ।
 सब तजि करौं चरन रज सेवा ॥
 कहहु ज्ञान विराग अरु माया ।
 कहहु सोभगति करहु जेहि दाया ।

दो०—ईश्वर जीव भेद प्रभु,
 सकल कहौ समुझाई ।
 जाते होइ चरन रति,
 शोक मोह भ्रम जाई ॥

लक्ष्मणजीने दुःखोंकी आत्यन्तिक निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्ति रूप मोक्षका साधन ज्ञान पूछा और ज्ञानका साधन वैराग्य पूछा तथा वैराग्य जिस मायासे करना है उस माया को पूछा और मायासे वैराग्य करनेका साधन भक्ति पूछी। जल तरंगवत ईश्वर और जीवमें अभेद होनेपर भी ईश्वर जीवमें क्या भेद है और क्यों है समझाकर कहनेके लिये अनुरोध किया क्योंकि भेद भ्रमके कारण ही भगवान रामके परमार्थ निर्गुण स्वरूप चतुर्थपादमें निजस्वरूप होनेपर भी परम प्रेम नहीं हो रहा है जिसके कारण जीव शोक मोह और विपरीत भावनामें जकड़ा हुआ है। इन सब प्रश्नोंके उत्तर भगवान राम संक्षेपसे इस प्रकार दे रहे हैं :—

थोरेहि मह सब कहउँ बुझाई ।
 सुनहु तात मत मन चितलाई ।
 मैं अरु मोर तोर तै माया ।
 जेहि बस कीन्हें जीव निकाया ॥
 गो गोचर जहँ लग मन जाई ।
 सो सब माया जानहु भाई ॥

तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ ।
 विद्या अपर अविद्या दोऊ ॥
 एक दुष्ट अतिशय दुख रूपा ।
 जा बस जीव पराभव कूपा ।
 एक रचइ जग गुन बस जाके ।
 प्रभु प्रेरित नहिं निजबल ताके ॥
 ज्ञान मान जहँ एकउ नाहीं ।
 देख ब्रह्म समान सब माहीं ॥
 कहिअ तात सो परम विरागी ।
 तन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी ॥

दो०—माया ईप्स न आपु कहु,
 जान कहिअ सो जीव ।
 बंध मोक्ष प्रद सर्व पर,
 माया प्रेरक सीव ॥
 धर्म ते विरति जोग ते ज्ञाना ।
 ग्यान मोच्छ प्रद वेद बखाना ॥
 जाते वेग द्रबउं मैं भाई ।
 सो मम भगति भगत सुखदाई ।
 सो स्वतंत्र अवलंब न आना ।
 तेहि आधीन ज्ञान विज्ञाना ॥
 भगति तात अनुपम सुख मूला ।

मिलइ जो संत होइ अनुकूला ॥
 भगति कि साधन कहउँ बखानी ।
 सुगम पंथ मोहि पावहि प्राणी ॥
 प्रथमहि विप्र चरन अति प्रीती ।
 निज-निज कर्म निरति श्रुति रीती ॥
 एहिकर फल पुनि विषय विरागा ।
 तब मम धर्म उपज अनुरागा ॥
 श्रवनादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं ।
 मम लीला रतिअति मनमाहीं ।
 संत चरन पंकज अति प्रेमा ।
 मन क्रम वचन भजन दृढ़ नेमा ॥
 गुरु पितु मातु बंधु पतिदेवा ।
 सब मोहि कहँ जानै दृढ़ सेवा ॥
 मम गुन गावत पुलक शरीरा ।
 गदगद गिरा नयन बह नीरा ॥
 काम आदि मद दंभ न जाके ।
 तात निरन्तर बस मैं ताके ।

दो०—वचन कम मन मोरि गति,
 भजन करहिं निःकाम ।
 तिन्हके हृदय कमल महु,
 करउँ सदा विश्राम ॥

(शेष पृ० २१ कालम दो का शेष)
 इनसे आत्मसमर्पण योगमें सहायता न मिलकर
 बाधा ही मिलती है ।

यदि इस नूतन पथको स्वीकार करना है
 तो उपरोक्त प्रकारके व्यर्थके प्रश्नोंमें समय न
 गँवाकर इसके लिए जो शास्त्र बने हैं उनका
 मनन करो । जिस समय तुम निराशाके घोर
 अन्धकारमें पड़ जाओगे सभी बातें तुम्हें अस्पष्ट
 और अर्थहीन प्रतीत होने लगेंगी । उस समय
 हृदयके अन्तरमें प्रकाश डालनेके लिए अधीर

या उलबला मत बन जाओ । धीर और स्थिर
 होकर पड़े रहो और इस मार्गसे होकर जो लोग
 कुछ आगे बढ़ गये हैं उनसे यथा साध्य शिक्षा
 ग्रहण करो । आत्म विकासके लिए परीशान
 मत हो, सर्वदा स्थिर प्रकृति होकर पूर्णज्ञान
 तथा प्रकाश प्राप्त करनेके लिए उसी करुणा
 वरुणामय आनन्दकन्द भगवान पर निर्भर करो,
 जो तुम्हारी अन्तरात्माका संचालन करते हैं
 और तुम्हारी सदा सहायता करनेके लिए प्रस्तुत
 रहते हैं ।

जीव परमानन्दसे क्यों हिचकता है

[मुख्य कारण मन्द प्रारब्ध और कुसङ्ग]

श्री रघुवंशदास जी उदासीन



किसी देशमें एक राजा रहता था। राजा और मंत्रीके परस्पर प्रेम व्यवहारसे राज्यका कार्य सुव्यवस्थित चल रहा था। परन्तु मंद प्रारब्ध तथा कुसङ्गके प्रभावसे राजा नित्य प्रति राज दरबारमें वेश्याओं तथा नाटियोंको बुलाकर गाने, बजाने, नाचनेकी महफिल लगाकर उसी में तल्लीन रहा करता था। और शुभ मार्ग, सत्सङ्ग, देव-दर्शन, तीर्थ-दर्शन, सदुपदेश एवं साधु-ब्राह्मण, गुरु सेवा आदि धार्मिक कृत्योंको कभी भूलकर भी ध्यानमें नहीं लाता था। मंद प्रारब्धसे कुसङ्गका प्रभाव ऐसा पड़ गया कि धार्मिक इतिहास, देवता, साधु, ब्राह्मणका नाम सुनते ही वह क्रुपित हो उठता। परन्तु राजा का प्रधान मंत्री बहुत ही सत्सङ्गी, सज्जन, प्रभु भक्त व्यक्ति था। राजाको समझाता तो समय-समयसे अवश्य था परन्तु राजा माननेको कब तैयार था। इस कारण मंत्री राजाके महफिलके समय वहाँसे चल देता और नदी किनारे जंगलमें एक महात्माकी कुटी थी, वहाँ जाकर करवद्ध नत मस्तक नम्र निवेदन करता—

“महाराज दया करके हम भूले हुए अज्ञानीको सत्पथ एवं कल्याणका मार्ग बताइये जिससे जन्म-जन्मके भवचक्रसे जीवका छुटकारा हो और इस दुस्तर मायाके प्रभावसे बचकर प्रभु परायण हो। और आप महापुरुषोंका दर्शन सत्सङ्ग सेवाके योग्य बन सकूँ।” पवित्र हृदयके पवित्र आवाजको सुनकर संतपुरुषका कोमल हृदय द्रवित हो उठता और नाना प्रकारके आध्यात्मिक कथा, आत्म निरूपण तथा सदुपदेश देकर मंत्रीको विदा करते। मंत्री गद्गद् वाणीमें धन्य प्रभु कह प्रणामकर आज्ञा ले राज दरबार को चला जाता। जैसे राजा अपनी महफिलमें नित्य-प्रति मग्न रहता वैसे ही मंत्री भी संत दर्शन सत्सङ्गमें मग्न रहता।

एक दिन राजाने मंत्रीसे पूछा—“आप नित्य प्रति हमारे महफिलके समय कहाँ और क्यों चले जाते हैं? यहाँ ऐसी आनन्दकी वर्षा होती है जिसमें हजारों नर-नारी आनन्द मग्न हो जाते हैं और बाह-बाह कहकर प्रसन्न चित्त

घर जाते हैं परन्तु आपका दुर्भाग्य है कि उपस्थित नहीं रहते हैं।”

मंत्रीने शीघ्र उत्तर दिया—“महाराज ! आप लोग अपने मनके आनन्दमें मग्न रहते हैं और हम इससे भी अधिक परमानन्द, आत्मानन्दमें एक संतपुरुष महात्माके पास जाकर सत्संगमें मग्न रहते हैं। मंत्रीकी बातोंका उपहास करते हुए राजाने कहा—“नहीं-नहीं हमारे महफिल जैसा आनन्द त्रिलोकीमें भी नहीं मिल सकता। आपने हमारे महफिल का आनन्द देखा ही नहीं।”

मंत्रीने कहा—“ठीक है परन्तु हमारे सत्संगका परमानन्द इस महफिलसे कई गुना श्रेष्ठ है।”

राजाने कहा—“इसका निर्णय तभी होगा जब हम आपके सत्संगको देखें और आप हमारी महफिल को देखें।”

मंत्रीने उत्तर दिया—“ठीक ही आप कह रहे हैं, निर्णय ऐसे ही होगा।

राजाने प्रथम मंत्रीको ही अपने महफिल में आनेकी प्रेरणा दी। मंत्रीने मान लिया। दूसरे दिन राजाने विशेषरूपसे महफिलका वृहत आयोजन कई एक प्रसिद्ध नर्तकियोंको आमंत्रित करके किया। महफिल भरी हास-परिहास, नाच, गाने होने लगे। सब लोग प्रसन्न चित्त वाह-वाह करने लगे। बेचारे मंत्री को ऐसी महफिल किस कामकी मन ही मन पश्चाताप करके उठकर जाना उचित न समझ कर अपने मनको उपरामकर नेत्र बन्द कर

सत्संगकी याद और परमात्माका चिन्तन करने लगा। राजाने समझा कि मंत्री सो गया, इस अभाग्यको ऐसे स्वर्गके दर्शन कैसे प्राप्त हो सकते हैं। यह तो किसी भाग्यवानका ही काम है। महफिल समाप्त हुई राजाको प्रणामकर मंत्री चलना चाहा। राजा बोला—“देखा आनन्द” मंत्री बोला—“देखा तो लेकिन हमारे सत्संगके सामने किंचित मात्र भी नहीं है।” राजाके मन में कुछ रोष उत्पन्न हुआ परन्तु बैर्य रखकर बोला—“अच्छा कल तू अपना सत्संग हमें दिखा।”

मंत्री बहुत अच्छा कह कर चल दिया और महात्माके पास पहुँचा और चरणोंमें सिर झुकाकर बैठ गया। महात्मा बोले—“आज इतनी देर क्यों हुई?” मंत्रीने दीन भावसे सर्व समाचार सुना दिया और कहा—“भगवन कल राजा आपके दर्शन और सत्संगको आनेवाले हैं यह मेरे से भी अपराध हुआ कि वगैर आपकी आज्ञा ऐसे मंद बुद्धि वाले दुराचारीको आपके दर्शन सत्संगमें लानेका वायदा कर आया हूँ।” महात्मा बोले—“कोई बात नहीं, तेरे प्रभावसे राजा के भी प्रारब्ध उदय होने वाले हैं तभी सत्संग में आनेका संकल्प हुआ। संतोंका दरबार सबके लिये है। सज्जन तो सज्जन होते ही हैं परन्तु दुष्ट दुराचारी को भी सज्जन बनानेमें सन्त ही समर्थ होते हैं।

दूसरे दिन राजा मंत्रीके साथ अपने एक दो वेश्याओं और सिपाही नौकरोंको लेकर महात्माके आश्रममें आया। राज दरबारमें तो

राजसिंहासन, गलीचे, गद्दे-कुर्सी आदि बैठनेको तैयार रहते लेकिन यहाँ जंगलमें महात्माके यहाँ कंकड़ पत्थर वाली जमीन बैठनेको मिलते ही राजा क्रोधित हो बोला—“क्या यही जगह परमानन्द वाली है ?”

मंत्रीने नम्र निवेदन किया—“जी हाँ, जगह तो यही है आपको बैठनेमें तकलीफ तो होगी परन्तु विराजिये और संत पुरुषके सदुपदेश सुनिये ।” राजा बैठ गये । मंत्रीके आग्रह पर महात्मा आध्यात्मिक सदुपदेश करना आरंभ किये और इस क्षण भंगुर नाशवान शरीर और उसके क्षणिक लौकिक सुख भोगसे उपराम होकर प्रभु परायण आत्मोन्नतिकी ओर राजाका ध्यान आकर्षित करने । महात्माने कहा—

माखी चन्दन पर हरै, गन्दे बैठे जाय ।
तिमि कुबुद्धि जन मूढ़को, हरि कथा ना सुहाय ॥

इतना सुनते ही राजा रुष्ट होकर उठ पड़ा और मंत्रीको सम्बोधित कर कहा—“तुमने हमारे आनन्दको भंग करके व्यर्थ समयको नष्ट कर इस जंगलमें पत्थर कंकड़में एक नंगेके पास लाकर बैठा दिया है, इसका बहुत बड़ा दण्ड तुमको राज दरबारमें भोगना पड़ेगा ।” इतना कहकर अपने साथियोंके साथ चल दिया और राज दरबारमें जाकर प्रति दिनकी भाँति अपनी महफिल बनाकर सुख भोगने लगा ।

मंत्री विचारेके मनमें तो कुछ चोभ हुआ लेकिन वह भी परमात्माकी इच्छा समझकर शान्त रहा और महात्मासे बोला—“भगवन् ! राजा दंड देनेको बोल गया है, आप कृपा करे

कि दंड कुछ भी मिलै, परन्तु आपका दर्शन सत्संग ने छूटे ।”

महात्मा बोले—“जब तुम्हें राजा दंड देनेको बुलावे तो कहना कि प्रथम मेरे गुरुको दण्ड दिया जाय बादमें मुझे ।”

मंत्रीने ऐसा ही किया । राजा प्रसन्न हुआ और सिपाहियोंसे महात्माको पकड़वा मँगाया और दरबारमें बुलाकर फाँसीकी सजा महात्माको सुना दी ।

महात्मा प्रसन्न हो बोले—“हरि इच्छा ।”

राजाके हुक्मसे फाँसीकी सारी तैयारी हो गई । राजाने महात्मासे कहा जिसको याद करना हो कर लो । समय करीब आ गया है । महात्मा बोले—“जिसे याद करना है वह तो हर समय याद रहता है, परन्तु एक कार्य मेरा रह गया है उसे पूरा करना चाहते हैं ।” राजाने आज्ञा दे दिया ।

महात्मा बोले—“कि दो थान मलमलका वस्त्र मँगा दीजिये ।”

दरबारमें क्या कमी, शीघ्राति शीघ्र दो थान मलमल आ गये । महात्मा बोले—“एकको पानी में भिगा दीजिये दूसरेको तेल और कोयलेमें ।”

दोनों वस्त्र अलग अलग भिगा कर ला दिये गये तब महात्माने कहा—“इन दो थान मलमलके एक एक छोरको पकड़ कर दो आदमियोंको देकर सम्पूर्ण शहरमें जमीन पर घिसीटते हुये वापस बुलाया जाये ।” शीघ्र ही दो घोड़सवार सिपाही तैयार हुए और कुछ ही

घण्टे बाद अपने अपने वस्त्र जमीन पर घसीट कर वापस आ गये ।

तब महात्माने कहा—“अब इन्हें धोबीको देकर शीघ्र ही धुला कर ठीक पहले जैसे थे वैसा ही करा दीजिये ।” शीघ्र ही धोबी बुलाये गये और वस्त्र धोनेको दे दिये गये । पानीका भिगा हुआ वस्त्र तो शीघ्र ही धोबी साफ करके सुखा कर दरबारमें लेकर हाजिर हुआ परन्तु तेल और कोयलेका भिगाया हुआ वस्त्र तात्कालिक अनेक यत्न करने पर भी नहीं साफ हुआ । राजाने कहा—“यह वस्त्र क्यों नहीं साफ किया ?”

धोबीने उत्तर दिया—“महाराज पानीका भिगाया हुआ शीघ्र साफ हुआ लेकिन यह तेल कोयले वालेको साफ करनेको बहुत परिश्रम और कई महीनों लगेंगे, कई बार भट्ठी लगानी पड़ेगी तब कहीं शायद साफ हो जावे, क्योंकि पानी वाले वस्त्रमें मैल ऊपर थी और इसके तह तहके अन्दर मैल जकड़ी हुई है ।”

राजाने महात्मासे कहा—“धोबी क्या कह रहा है ।”

महात्मा बोले—“बिल्कुल सत्य कह रहा है । ठीक इसी प्रकार जिस पुरुषका अन्तःकरण मन्द प्रारब्ध और कुसंग कुबुद्धिसे जकड़े हुए मैले रहते हैं तात्कालिक उनपर सत्संग भी ऐसे

ही अपना असर नहीं करता है इसी कारण आज हमें फाँसीकी सजा सुनाई गई है । और कुबुद्धि मन्द प्रारब्ध, कुसंगके कारण आपको सदुपदेश सत्संग अच्छा नहीं लगा । कई जन्मोंके मलीन संस्कार और कुसंगको साफ करनेके लिये भट्ठी रूपी नाना प्रकारके सत्संग और सदुपदेशसे ही चिर कालमें परमानन्दकी प्राप्ति हो सकती है । दूसरा कोई उपाय नहीं है । महात्माके बचनोंको सुनकर राजा प्रभावित हो गया और उनके चरणोंमें सिर रखकर अपने अपराधोंकी क्षमा याचना करके उनके शरणागत हो गया । दयालु महात्मा अपने सदुपदेश सत्संग द्वारा कुछ ही दिनोंमें राजाको सज्जन भक्त बना कर उसका भी कल्याण कर दिये ।

जिस तरह नित्य रस्सीके रगड़से कठोरसे कठोर पत्थर भी घिस जाते हैं उसी प्रकार क्रमशः सन्त पुरुषोंके सत्संगमें नित्य प्रति श्रद्धा सहित जानेसे और उनके अनुकरणसे मंद प्रारब्ध भी श्रेष्ठ और कुसंग भी सत्संग बन जाते हैं और बड़ा से बड़ा दुराचारी भी संत महापुरुष बन जाते हैं । शास्त्रोंमें ऐसे अनेक दृष्टान्त मिलेंगे । इसलिये निश्चय चित्त, विश्वास के साथ प्राणी मात्रको सत्पुरुषोंके दर्शन, सेवा, सत्संगका लाभ जरूर उठाना चाहिए ।

परमानन्द सन्देशका सदस्य बनकर

११ साधारण अंकोंके अतिरिक्त लगभग ४०० पृष्ठोंका आत्मपुराण विशेषांक निःशुल्क प्राप्त करें । वार्षिक चन्दा ५) रजिस्ट्री डाकखर्च ५० न०पै० । पता—शारदा प्रतिष्ठान सी०के० १५।५१ सुड़िया, वाराणसी ।

पावन तीर्थ राम टेकड़ी

श्री स्वामी राजमुनिजी

०

सीताहरणके माया-जालमें फँसकर सज्जन-द्रोषी रावण और उसके साथी असुरोंका नाश करनेके लिए सीतान्वेषणके व्याजसे जब परब्रह्म रामभद्र अपने अनुज लखणलालके साथ पञ्चवटीसे निकल जंगल-जंगलकी खाक छान रहे थे तो बीच रास्तेमें उन्होंने एक लघुतम मनोरम अधित्यकाको अपनी विश्राम स्थली बनाया। यह पहाड़ी (टेकड़ी) पूना नगरके एक छोर पर स्थित है। इस छोटी पहाड़ीको प्रभुने परम रमणीय जानकर कुछ काल तक निवास किया।

श्रीरामके पवित्र चरणोंका जहाँ जहाँ स्पर्श हुआ वे सभी श्रेष्ठ तीर्थके सदृश परम पावन है। प्रभुके चरणोंका यह प्रभाव है कि उनके स्पर्श-मात्रसे कुलिश कठोर जड़ शिला भी कोमल कान्त नारी श्रेष्ठ अहिल्याके रूपमें परिवर्तित हो गयी। फिर वे जहाँ परमानन्दकी अक्षय निधि श्रीरामभद्र प्रभु कुछ काल तक नियमित निवास किए हैं वहाँके कण-कणमें रहने वाली दिव्य शक्ति त्रितापसंतप्त प्राणीको स्पर्श मात्रसे सदाः शान्ति प्रदानकर ताप निर्मुक्त कर देती है। सचमुच यह भूमि तीर्थराज प्रयागसे भी पावनतम है।

भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम अपने उस निवासको भुला नहीं सके। दयामयी प्रत्येक क्रिया लोगोंके हितके लिए ही हुआ करती है। प्रभुको यह बात खलने लगा कि बनवासके समय जिस टेकड़ीमें बड़े प्रेमसे समय व्यतीत किया, अभी तक लोग इससे पूर्ण परिचित न हो सके। मानों इसी लिए उन्होंने अपने प्रिय भक्त बाबा श्रीशारदाराम मुनिजीको प्रेरणा दी कि तुम वहाँ जाकर तपस्या करो। और इसका महात्म्य लोगोंमें प्रसारित करो।

भगवान् के समान उनके भक्त भी बड़े ही दयालु होते हैं, गोस्वामी जी कहते हैं—'परहित-लाति सन्त तनु धरहीं'। बाबा श्रीशारदाराम जीने भी प्रभुकी पावन प्रेरणा पाकर उस पवित्र रमणीय पहाड़ी पर अपना चिमटा गाड़ा और वहीं डट गये। उन्हें परम शान्तिकी अनुभूति होने लगी। भगवान् श्रीरामके उस बनवासी रूपको पुनः पुनः स्मरण कर वे आनन्द विभोर होने लगे। प्रभुके चरणोंमें उनकी इतनी तन्मयता बढ़ चली कि वे सहज समाधिस्थ हो गये।

पहले यहाँ लोगोंका आज जितना आवागमन नहीं था। तब वे यह भी नहीं जानते थे कि बनवासके समय भगवान् श्रीराम इस टेकड़ी

पर कुछ दिन निवास किए थे। हाँ कभी-कभी गौचारक बच्चे गावोंको चराने वहाँ पहुँच जाया करते थे। बच्चों ने जब वहाँ बाबाजी को समाधिस्थ बैठा देखा तो उन्हें विलक्षण कौतूहल जाग उठा। घर जाकर सबोंने अपने अपने माता पितासे बताया कि उस टेकड़ी पर एक बाबाजी आए हैं, वे आँखें मुँदे बैठे हैं। उनके सर्वाङ्गमें भस्म रमा है, पासमें धूनी लगी है और वहाँ एक चिमटा कमण्डलु पड़ा है। इसके अतिरिक्त उनके पासमें और कुछ भी नहीं है।

बच्चोंकी बात सुनकर बड़े, बूढ़े, स्त्री, पुरुष सभीको तपस्वी बाबाकी दर्शन करने की तीव्र इच्छा जाग उठी। वे सभी निर्दिष्ट टेकड़ी पर बाबाजी के दर्शन करने आने लगे। उस तपो भूमि पर आतेही लोगोंको परम शान्तिका अनुभव होने लगा। हृदयमें सुन्दर भाव उठने लगे। एक तो पहलेसे ही यहाँकी प्रकृति श्रीराम लक्ष्मणजीके पूर्व निवाससे अनवरत अलौकिक गाम्भीर्य पूर्ण शान्तिसे परिपूर्ण थी। अब और भी बाबाजीकी तपश्चर्यासे यहाँकी भूमि दिव्य हो गयी है। दर्शनार्थी बाबाजीका दर्शन पाकर अपनेको कृत कृत्य मानने लगे। सभीका हृदय श्रद्धाभक्तिसे भर गया। उन्हें मानसिक शान्ति मिली।

टेकड़ी पर बाबाजीके शुभागमनका समाचार सारे नगरमें फैल गया। दर्शनार्थियोंका ताँता बँध गया। बाबाजी पहले बहुत दिनों तक मौन रहकर प्रभुका चिन्तन करते रहे। किन्तु श्रद्धालु भक्तोंके जिज्ञासा भरे हृदयके भाव उन्हें मौनी नहीं रहने दिए। बाबाजीने विचार

किया अब इन भूले पथिकोंको मार्ग दिखाना ही होगा।

अब बाबाजी अपनी दिनचर्यामें से कुछ समय सत्संगके लिए देने लगे। निर्धारित समय पर आ आकर भक्त उनका उपदेशामृत पान करने लगे। बाबाजीने लोगोंसे बताया—वनवासके समय श्री भगवान् श्रीराम कुछ समय तक यहाँ निवास किये थे। इसका नाम मुनियों ने राम टेकड़ी रखा। यहाँ पहले भी बहुतसे उदासीन मुनि तपस्या करते आये हैं। यह श्रीरामके पद्म पादके स्पर्शसे परम पावन तीर्थ हो गया है। प्रभुकी प्रेरणासे मैंने भी यहाँ आजीवन रहकर भगवद् भजन करनेका निश्चय किया है।” यह सुनकर सभी भक्तोंने बड़े भक्ति भावसे वहाँकी धूलि अपने मस्तकमें लगायी। सभी लोग भगवान् रामके उस वनवासी रूपको जिस रूपसे भगवान् यहाँ निवास किए थे स्मरण कर प्रफुल्लित हो उठे। वे बार बार आनन्दित होकर उस दिव्य भूमिको नमस्कार करने लगे।

इस प्रकार इस महातीर्थमें आकर त्रितापसे संतप्त लोगोंको बाबाजीसे महान् शान्ति मिलने लगी। दिन प्रतिदिन अधिक-से-अधिक दर्शनार्थी बाबाजीके दर्शनके लिए आने लगे। बाबाजी अपने भजनमें बिघ्न जानकर तब वहाँ गुफा बनवाकर उसमें रहने लगे। अब नियमित समय पर ही दर्शनार्थी उनका दर्शनकर सकते थे। अपनी बाह्य आन्तरिक साधनाके अतिरिक्त बाबाजीने अपने अनुभवसे अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। जिसमें ‘निर्गुण महारामायण’ प्रमुख है।

इस ग्रन्थमें उन्होंने रामके उस रूपका विवेचन किया जो मनवाणीसे परे हैं। जिस रामका गुणालुवाद उपनिषदोंने मुक्तकण्ठसे गाया है।

भक्तोंके परम आग्रहसे बाबाजीने वनवासी श्री रामकी पुण्यस्मृतिमें राममन्दिरके साथ-साथ अनेक और भी देवालय बनवा दिये हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ अतिथिशाला, सत्संग भवन गोशाला, अन्नक्षेत्र आदि अनेक दिव्य भवनों का निर्माण हो गया है। जिसमें अतिथि, अभ्यागत, साधु, फकीर वानप्रस्थ गृहस्थ सभी को समुचित आश्रय मिलता है। उनके लिए अन्नसत्र सदा उन्मुक्त रहता है। प्रतिदिन सत्संग भवनमें अनेक सत्संग प्रेमी बाबाजीका उपदेशाश्रित पान करते हैं। सोमवारके दिन

दर्शनार्थियोंकी काफी भीड़ रहती है। अभ्यागत साधुओंका अतिथ्य स्वयं बाबाजी बड़े प्रेमसे करते हैं। यही कारण है कि यहाँ सन्त मण्डली सदा जुटी रहती है। कहा भी है—‘जहाँ सन्त तहाँ तीरथराजू’।

मुझे भी इस पवित्र तीर्थके दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। न जाने यहाँकी भूमिमें क्या विचित्र शक्ति है कि वहाँ जाते ही मनके सारे कल्मष दूर हो जाते हैं। हृदय विचित्र दिव्य भावोंसे भर जाता है। वस्तुतः तीर्थराज वही है जहाँ जाने पर रजस्-तमके विशेष अक्षुण्ण अन्धकार नष्ट होकर मनमें सात्त्विक ज्योति प्रकाशित होती हो।

समाचार पंजीयन (केन्द्रीय) कानून १९५६ के नवें नियम के अन्तर्गत
अपेक्षित ‘परमानन्द सन्देश’ से सम्बन्धित विवरण

१—प्रकाशन का स्थान.....शारदा प्रतिष्ठान सी०के० १५।२१ सुड़िया, वाराणसी,
२—प्रकाशन अवधि.....मासिक, मास के प्रथम सप्ताह में
३—मुद्रक तथा प्रकाशकका नाम.....भद्रसेन वैद्य
राष्ट्रीयता.....भारतीय
पता.....सी० २२।११ कबीरचौरा, थाना—चेतगंज वाराणसी

४—सम्पादक का नाम.....भद्रसेन वैद्य
राष्ट्रीयता.....भारतीय
पता.....सी० २२।११ कबीरचौरा वाराणसी

५—स्वत्वाधिकारियों का नाम पता...१—अजित मेहता ११८२।२ शिवाजी नगर पूना-५
२—भद्रसेन वैद्य सी० २२।११ कबीरचौरा वाराणसी,

मैं भद्रसेन वैद्य घोषित करता हूँ कि मेरी जानकारीमें विश्वासके अनुसार
उपरोक्त विवरण सही है।

ता०—२२—२—६३

हस्ताक्षर—
भद्रसेन वैद्य

आत्म-गुरु-वन्दना

श्री सरयू प्रसाद शास्त्री (गार्ग्यमुनि)

(सवैया)

(१)

गुरु के पद पंकज पै नत हूँ, नित ही शरणागत देव जहाँ ।
गुण गान करें उनका मन में, अभिमान कभी रखते न वहाँ ॥
विधि-शंकर-विष्णु-महेन्द्र भजें, गुरु सेवक होकर नम्र जहाँ ।
करुणा करके करुणा करिये, करुणाकर हे गुरुदेव ! यहाँ ॥

(२)

तजके मद-मोह-विलास सभी, श्रुति-शास्त्र-पुराण कथानक हा ।
घर-बार तजा, परिवार तजा, कुलरोति प्रतीति विचार बहा ॥
सुत-दार धनादि किनारे किया, गुरु दर्शन एक आधार रहा ।
करुणा करके करुणा करिये, भवसागर धार अपार महा ॥

(३)

गुरुदेव दयालु उदार मना, यह बात छिपी जनमें न जहाँ ।
कुल, जाति न धर्म, धनी निर्धनी, गिनते न कभी मतिमान महा ॥
गुरु मंत्र जपे, गुरु काम करे, अति हर्ष करे न विषाद जहाँ ।
करुणा करके करुणा करते, करुणा वरुणालय नाथ वहाँ ॥

(४)

उस मानव ने सब तीथे किया, अवनी पर दान दिया तन से ।
बहु यज्ञ किया सुर पूजन या द्विज-भोजन वस्त्र विभूषण से ॥
उसने पितरों का उद्धार किया, जगमें अति पूजित हो जन से ।
जिसने गुरु के पद-पंकज का नित ध्यान किया छनमें मन से ॥

(५)

जप-योग विराग नहीं कुछ है, तप त्याग समाधि नहीं है जहाँ ।
सुख-साधन साध नहीं जब है, अनुभूति-विभूति रही न जहाँ ॥
बस, नाम आधार निहारें प्रभो ! शरणागत पालन हार वहाँ ।
करुणा करके करुणा करिये, गुरुदेव ! यही विनती है यहाँ ॥

(शेषांक पृष्ठ ८ का)

साथ भलाई और बुराईके साथ बुराई करते हैं। परन्तु जो खल लोग होते हैं वे अपने उपकारीके साथ भी बदनीति ही करते हैं। इसी दोषके कारण लोग इनका सामना नहीं करना चाहते। इसीलिए गोस्वामी तुलसीदासजी रामचरितमानसमें सबकी स्तुति करते हुए इन खलोंकी अर्थात् दोषी मुखवालोंकी भी वन्दना करते हैं कि प्रभु कृपासे इनका सामना न हो क्योंकि इनका स्वभाव ही तन-मन-धन से अनुपकार करना है। यथा—

पर हित हानि लाभ जिन्ह करें । उज्रें हरष विषाद बसेरें ॥

हरिहर जस राकेस राहु से । पर अकाज भट सहसबाहु से ॥

जे पर दोष लखहि सह साखी । परहित घृत जिन्हके मन माखी ॥

पर अकाजु लागि तनु परि हरहीं । जिमि हिम उपल कृषी दलि गरहीं ॥

कपटी दुष्ट स्वभाव वाले दुखदाई जिसके मुख देखने मात्रसे अपने परमहितकी हानि हो ऐसे रावणको साक्षात् काल और राहूके समान जानना चाहिये। दुष्ट मन आत्माके लिये राहूके समान है। यह अहंकारी रावण साक्षात् राहू ग्रह है। इसीके कारण परमानन्दका प्रकाश नहीं फैलने पाता है। श्री शंकराचार्यजी भी अहंकारकी उपमा राहू-ग्रहसे देते हैं—

अहंकार ग्रहान्मुक्तः स्वरूपमुपपद्यते ।

चन्द्रवद्विमलः पूर्णः सदानन्दः स्वयंप्रभः ॥

भाव यह है कि अहंकाररूपी राहू-ग्रहसे मुक्त हो जाने पर चन्द्रमाके समान आत्मा-निर्मल पूर्ण एवं नित्यानन्द स्वरूप स्वयं प्रकाश होकर अपने स्वरूपको प्राप्त हो जाता है।

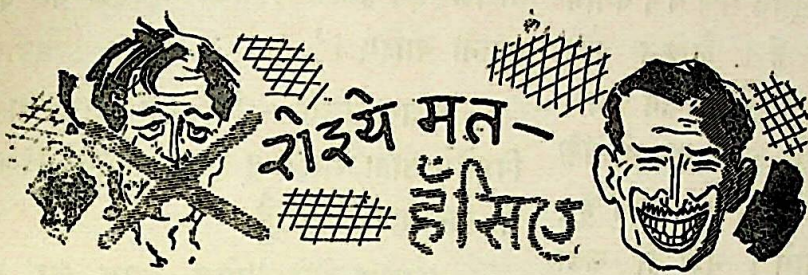
बाबाजी कहते हैं कि इस मनरावणकी ओरसे सदा सावधान रहो और उसे ऐसे देखो मानो साक्षात् काल बनकर राहू ग्रसनेके लिए तैयार है। काल शब्दसे यहाँ यह ध्वनि प्रकट होती है कि यह मन रावण कालनेमि राक्षसके समान कपटी और छद्मवेषी भी है। क्योंकि कभी-कभी यह ऊपरसे निर्दोष हितकारी प्रतीत होता है, पर उस पर विश्वास नहीं करना चाहिए। भीतरसे यह रौरव नरकमें भटकनेवाला काल स्वरूप है। इसे काल इसलिये भी कहते हैं कि यह अकाल (परमात्मा) का द्वेषी और उनसे अपनेको अलग मानता है। जिसका मन काल और राहूके समान स्वभाववाला है वह व्यक्ति कलियुगका रावण है।

बाबाजी के ग्रन्थ

सद्गुरुदेव बाबा शारदारामजी महाराज रचित निर्गुण महारामायण, भागवतकिरण आदि ग्रन्थोंको जो सज्जन खरीदना चाहें, वे नीचे लिखे पतेसे मँगा सकते हैं। पत्र लिखकर सूचीपत्र मुफ्त मगायें।

शारदा प्रतिष्ठान
सी० के० १५।५१ सुडिया, वाराणसी।

श्री तीर्थराम टेकड़ी
हड़पसर, पूना।



और मनन कीजिए

एकोदेवः सर्वभूतेषु गूढः

श्री सतीश कुमार

[परमात्मा एक है और वही सभी भूतोंके अन्दर छुपा है। अज्ञानी लोग अपना-अपना परमात्मा अलग अलग मानकर आपसमें वैर भाव, ईर्ष्या, द्वेष रखते हैं। जैसे प्रत्येक लहर में एक ही जल व्याप्त है वैसे ही सर्वत्र परमात्मा ही भरा है। जिनकी दृष्टि व्यापक और उदारभाव नहीं है वे परमात्माके ही विभिन्न रूप देवताओंको अलग अलग मानकर लड़ते हैं। हिन्दूओंकी दुर्बलताका एक कारण यह भी है कि वे सनातन धर्मके सही स्वरूपको न समझ कर संकीर्णताके कारण स्वयं गुमराह हैं और दूसरे भावुक लोगोंकी श्रद्धा और निष्ठाको ठेस पहुँचाते हैं। “सनातन” यह परमात्माका नाम है। जो मनुष्य अखिल ब्रह्माण्डमें जड़ चेतनके कण-कणमें आदि कारण सर्वाधिष्ठान एक सनातन परमात्माको ही व्यापक देखता, मानता और जानता है वही सच्चा सनातन धर्मी है। इसी कारण यह धर्म अजर अमर और अनादि है।]

○

बादशाहका दरबार लगा था। काजी मुल्ला वजीर आदि सभी अपने अपने स्थान पर उपस्थित थे। एक अपराधी ब्राह्मणके मुकदमें का फैसला हो रहा था।

बादशाह ने पूछा—“मुजरिमका कसूर क्या है?”

कोतवाल बोला—“हुजूर इसने काजी साहबकी तौहीनी की है?”

ब्राह्मण बोला—“हुजूर मेरे मुखसे केवल इतनाही निकल गया कि काजीके भेजेमें अक्ल कम और चर्बी ज्यादा है। हमारे हिन्दू धर्ममें भूठ बोलना पाप है इसीलिये सच सच कह दिया। गरीब पर रहम फरमाया जाय।”

काजी साहब गुस्सेसे लाल होकर बोले—“देखा जहाँपनाह! इस कम्बख्तकी गुस्ताखी। इसकी जीभ काट लेनी चाहिए।”

बादशाहने कहा—“तुमने सच सच बयान किया है इसलिये मैं खुश हूँ। लेकिन कोई बुद्धिमान आदमी ही किसी दूसरेको कम अक्ल कहनेका हक रखता है। मैं अभी तुम दोनोंके अक्लका इम्तहान लूँगा। यदि तुम पास हुए तो रिहा कर दिए जाओगे। नहीं तो कड़ी सजा मिलेगी।” कुछ रुककर बादशाहने काजी और ब्राह्मणकी ओर मुखातिब होकर पूछा—“एक माने क्या होता है।”

ब्राह्मण बोला—“पहले काजी साहबको जवाब देना चाहिए क्योंकि वे बुजुर्ग हैं।”

बादशाहने कहा—“ठीक है।”

काजी बोले—“हुजूर यह तो मामूली सवाल है। कोई पेचीदा सवाल पूछकर अक्ल-मन्दीका फैसला करना चाहिए। एक अक्लको कहते हैं, यह गिनती है।”

ब्राह्मण बोला—“गरीब परवर! काजी साहब का जवाब कोई मानी नहीं रखता।”

बादशाहने पूछा—“फिर तुम बतलाओ।”

“हुजूर, हमारे सनातन धर्ममें एकके माने परमात्मा या खुदा होता है। क्योंकि एक वही अकेला रहने वाला है। वही ‘एक’ जहाँ जहाँ अपना जलवा दिखा रहा है। वही आपके अन्दर हाजी साहबके अन्दर तथा मेरे अन्दर बोल रहा है। वह एक भी है और बहुत भी है। जिसकी जितनी पहुँच है वह उतना ही उसे जानता है।”

काजीने झुल्लाते हुए कहा—“जहाँपनाह अगर यह जाहिल इतना बड़ा जानकार बनता है

तो फिर इसे हमारे दिलके अन्दरकी भी बात बतानी चाहिए।”

ब्राह्मण बोला—“जो इस हाड़ मासके पिजड़ेमें तोता बोल रहा है वह काजीके दिलकी भी बात बता सकता है।”

बादशाह बोले—“सोच समझ कर बात करो। क्या तुम बता सकते हो इस समय काजी के दिलमें क्या है?”

“हुजूर, काजी साहब कुछ शर्त लगावें तो बता सकता हूँ।”

बादशाह काजीसे बोले—“तुम्हें शर्त मंजूर है या नहीं?”

काजीने कहा—“यदि मैं हारा तो एक सौ मोहरें दूँगा नहीं तो इस ब्राह्मणके बच्चेसे वस्त्र करूँगा।”

ब्राह्मणने कहा—“मुझे मंजूर है।”

बादशाह बोले—“बतलाओ काजीके दिलमें क्या है?”

ब्राह्मण बोला—“इस समय काजीके दिलमें यह बात है कि खुदा एक है और पाक है।

बादशाहने काजीसे पूछा—“ब्राह्मण ठीक कहता है?”

भला अब काजी कैसे कहें कि खुदा एक नहीं और पाक नहीं है। यदि कहेंतो इस्लामके खिलाफ होनेसे मारे जायँ।

मजबूर काजीने कहा—“ठीक है।”

ब्राह्मण शर्त जीत गया। काजी साहब झेपते हुए बोले—“अबकी बार तू मेरे दिलकी बात बता तो जानें।”

ब्राह्मण बोला—“अबकी दो सौ मोहरोंकी शर्त रहेगी।”

काजीने शर्त मंजूर करते हुए कहा—“बताओ इस समय मेरे दिलमें क्या है?”

ब्राह्मण बोला—“काजीके दिलमें यह बात है कि खुदा बादशाहको बेटा दे और वह जिन्दा रहे।”

बादशाहने काजीसे पूछा—“क्या ब्राह्मण ठीक कहता है?”

काजी यदि यह कहे कि नहीं गलत है तब बादशाह नाराज हो जायँ। इस बार भी ब्राह्मण जीत गया।

काजी साहबने कहा—“इस बार मैं तुम्हारे दिलकी बात बताऊँगा।”

बादशाहने ब्राह्मणसे पूछा—“तुम्हें मंजूर हैं?”

ब्राह्मण बोला—“हुजूर! यदि काजी साहब मेरे दिलकी बात बता दें तो मैंने जितना धन जीता है वह भी दे दूँगा, और उतना और अपने पाससे भी दूँगा। यदि काजी नहीं बता सकेंगे तो उसका दूना और लूँगा।

काजी साहबने शर्त मंजूर कर ली। बादशाह ने पूछा—“बताओ ब्राह्मणके दिलमें इस समय क्या बात है।”

काजीने कहा—“ब्राह्मणके दिलमें इस समय बात यह है कि रामही खुदा है और वह एक है।”

“काजी साहब ठीक कहते हैं या नहीं?” बादशाहने ब्राह्मणसे पूछा।

ब्राह्मणने छूटते ही कहा—“कौन मूर्ख रामको खुदा मानता है, मैं तो अपने गुरु महाराजको ही खुदा मानता हूँ।”

बादशाहने कहा—“ब्राह्मण ठीक कहता है। हिन्दू लोगोंके बहुतसे खुदा होते हैं। उनका कोई एक खुदा थोड़े ही है। हर एक हिन्दूका खुदा जुदा जुदा है।”

युक्तिसे चतुर ब्राह्मणने यह भी शर्त जीत ली और बोला—“ज्ञानीकी दृष्टिमें परमात्मा एक है परन्तु इस सत्यको अज्ञानी माननेके लिए तैयार नहीं होता। इसीलिए संकीर्ण विचार वाले लोग राम, कृष्ण, शिव, विष्णु, गणेश, गुरु परमात्मा आदि नामको अलग अलग देवताका नाम मानकर आपसमें लड़ते हैं। यही हिन्दुओं के पतनका कारण है। इसीलिये कहा है—

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः ॥

इस सम्प्रदायवादके संकीर्ण भगड़ेको शांत करनेके लिये प्रत्येक मनुष्यको सत्संग और स्वाध्याय दिन पर दिन बढ़ाना चाहिए। सारे विश्वको एक नजरमें देखनेके लिये सबसे ऊँची मंजिल पर खड़े होनेकी जरूरत है। वह मंजिल भारतमें ही है। उसे अध्यात्म विद्या और आत्म ज्ञान कहते हैं।

प्रश्नोत्तर

इस स्तम्भमें हम आपके प्रश्नोंके उत्तर प्रकाशित करते हैं। कृपया अपने प्रश्न प्रति-
मासकी १५ तारीख तक अवश्य भेज दिया करें। —सम्पादक

श्री कृष्णशंकर शास्त्री, लाजपत नगर दिल्ली,

प्रश्न—जब आप परमात्माका स्वरूप है परन्तु बिना निष्काम भक्तिके ज्ञान नहीं निगुण मानते हैं तब फिर उसमें मिथ्या होता है। भक्ति ज्ञानकी माता है और ज्ञान उसका पुत्र है। इसी भावसे भक्तिको मोक्षका द्वार कहा है। मोक्षका द्वार जो भक्ति है उसके चार द्वारपाल हैं—१-शम २-विचार ३-संतोष ४-सतसंग, यत्नसे इन चारोंकी उपासना करनी चाहिए। जैसे राजाके द्वारपाल राजगृहके फाटक खोल देते हैं वैसे ही ये चार साधन रूपी द्वारपाल मोक्षके द्वारको खोल देते हैं। द्वार खुलते ही ज्ञान स्वरूप परमानन्दमय सच्चिदानन्दका साक्षात्कार होता है।

उत्तर—बिना गुणोंके आरोप किए उसकी भक्ति कदापि नहीं हो सकती। इसीलिए उसमें गुणोंका आरोप किया जाता है।

प्रश्न—ज्ञात्योंमें ईश्वरकी निष्काम भक्ति को मोक्षका द्वार कहा है परन्तु वेदमें ज्ञानसे मोक्ष कहा है। यहाँ इन दोनोंमें किसका कथन ठीक है।

उत्तर—दोनों कथन ठीक हैं। इनका आपसमें विरोध नहीं है। मोक्ष ज्ञानसे ही होता

है।

श्री जे० पी० चौधरी काव्यतीर्थ, वाराणसी।

प्रश्न १—भगवान् कृष्णने गीताके ९वें अध्यायमें कहा है 'सदसच्चाहमर्जुन' (९-१९) अर्थात् सत् और असत्भी मैं ही हूँ। जब असत् भी भगवान् ही हैं तो असत् विनाशी क्यों हैं।

समाधान—असत् दृश्य कार्य होनेसे विनाशी है। जैसे घटकार्य होनेसे विनाशी है और परमात्मा कारण होने से अविनाशी है जैसे मृत्तिका घटका कारण होनेसे घटकी अपेक्षासे अविनाशी है जैसा कि छान्दोग्य उपनिषद्में भी वर्णित है :— 'वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्।'

प्रश्न—जब वेदान्त सिद्धान्त 'सर्वं खल्वि-

दं ब्रह्म' है तो वेदान्त सिद्धान्तके ज्ञाताओंमें भी रागद्वेष क्यों देखे जाते हैं।

समाधान—जब सम्पूर्ण प्रपञ्च ब्रह्म है तो रागद्वेष भी ब्रह्म हैं क्योंकि रागद्वेष भी प्रपञ्चके ही अन्तर्गत हैं। तत्त्वदर्शी जैसे प्रपञ्चको ब्रह्मका आभास होनेसे ब्रह्ममात्र जानता है उसी प्रकार रागद्वेषको भी आभास मात्र होनेसे ब्रह्म मात्र जानता है। ज्ञानी अज्ञानीके रागद्वेषमें यह अन्तर है कि ज्ञानीके रागद्वेष दर्पणमें प्रतिबिम्ब वत प्रतीत मात्र हैं और अज्ञानीके रागद्वेष केमरा में फोटोके समान स्थायी है।

सद्गुरुदेव बाबाजीकी यात्रा

श्री १०८ सद्गुरु बाबा शारदारामजी उदासीनमुनि प्रतिवर्षकी भाँति अप्रैल मासके उत्तरार्धमें उत्तर भारतकी यात्रा पर प्रस्थान करेंगे। ज्ञातव्य है कि इसवर्ष रामनवमी बाबाजी श्री तीर्थराम टेकड़ी पूना पर ही राम मन्दिरमें करेंगे। महाराज जीकी आगामी यात्राके विषयमें सूचना मिली है कि महाराजजी २९-४-६३ को सायंकाल ३ बजे पूनासे प्रस्थान करेंगे। और बम्बई, लखनऊ, अकबरपुर होते हुए कप्तान-गंज उदासीनपुरी आश्रम पर पहुँचेंगे।

—सम्पादक

श्री तीर्थ रामटेकड़ी पर रामनवमी

सत्-चित्-आनन्द धन परब्रह्म रामकी राम टेकड़ी पूनामें इस वर्ष बड़ी धूम धामसे राम जन्मोत्सव मनानेका आयोजन किया गया है। इस उत्सवमें विशेष उल्लासका कारण यह है कि इस वर्ष सद्गुरुदेव महाराजजी राम मन्दिर में ही विराजेंगे। ज्ञातव्य है कि प्रतिवर्ष महाराज जी रामनवमी उदासीनपुरी आजमगढ़में ही करते थे। हरि इच्छासे इस बार ऐसा शुभ संयोग पाकर पूनाके भक्त जन फूले नहीं समा रहे हैं। गुरु परमात्माकी बड़ी कृपा है। इस अवसर पर यज्ञ-हवन, पूजन, प्रार्थना, कीर्तन, कृष्णबाल-लीला, सत्संग, भण्डारा और बाबाजीके प्रवचन की परमानन्दायक मन्दाकिनी प्रवाहित होगी।

परमानन्द संदेशके आजीवन सदस्य

निर्वाण श्री लक्ष्मण दासजी उदासीन, गुरु द्वारा ऋषिआश्रम रानूपाली अयोध्याजी, परमानन्द संदेशके आजीवन सदस्य बने हैं। गुरु परमात्माकी असीम अनुकम्पा है। इसके लिए हम अभारी हैं। — सम्पादक

सदस्योंके लिए आवश्यक सूचना

जिन सज्जनोंको परमानन्द संदेशके पिछले अंक न प्राप्त हुए हों उन्हें पुनः पत्र लिखकर कार्यालयसे मँगा लेना चाहिए। अथवा नियमित परमानन्द संदेश न प्राप्त होता हो तो कार्यालयको सूचित करनेकी कृपा करें। पत्रमें अपना डाकका पता पूरा हिन्दीमें स्पष्ट अक्षरोंमें सदस्य संख्याके साथ लिखना चाहिए।

आगामी अङ्कसे दो नये स्तम्भ

१—“कृष्ण चरित मानस” नामक एक पद्यमय महाकाव्य धारावाहिक रूपमें हम प्रकाशित करने जा रहे हैं। आशा है जिज्ञासु भक्त जन पसन्द करेंगे। इसके रचयिता हैं श्याम-सुन्दर शुक्ल, वाराणसी।

२—“आपके अनुभव” शीर्षकसे हम सहृदय पाठकों एवं भक्तजनोंके जीवनमें घटने वाली छोटी बड़ी प्रेरणादायक शिक्षाप्रद अनुभव पूर्ण सत्य घटनाओंका प्रकाशन करेंगे। इसके लिए हम भक्तजनोंसे प्रार्थना करते हैं कि वे अपने जीवनकी उज्ज्वल एवं चमत्कारी घटनायें लिख कर भेजनेकी कृपा करें।

“परमानन्द संदेश” का उद्देश्य और नियम

॥ उद्देश्य ॥

“परमानन्द संदेश” विशुद्ध आध्यात्मिक-धार्मिक सचित्र मासिक पत्र है। परमात्माके नामका गुणगान करते हुए धर्म, भक्ति, वैराग्य, उपासना, जप, तप, साधन, सदाचार एवं आत्मज्ञान समन्वित साहित्य द्वारा जनताका मनोमञ्जन तथा सन्त महा-त्माओंके परमानन्द दायक संदेशको घर-घर पहुँचाना इसका उद्देश्य है।

नियम

- १—“परमानन्द संदेश” का नया वर्ष कार्तिक मास से प्रारम्भ होकर आश्विनमें समाप्त होता है।
- २—वर्षके किसी भी मासमें सदस्य बनाये जा सकते हैं परन्तु सदस्योंको चालू वर्षके पिछले अंक देकर आश्विनमें उनका वर्ष पूरा कर दिया जाता है।
- ३—प्रत्येक वर्षका प्रथम अंक विशेषांक होता है जो सदस्योंको निःशुल्क दिया जाता है।
- ४—सदस्य तीन प्रकारके बनाये जाते हैं—[१] साधारण, [२] स्थायी, [३] आजीवन।
- ५—साधारण सदस्यता शु० ५) वार्षिक स्थायी शुल्क ६ वर्षोंके लिये २५) रुपये हैं और आजीवन सदस्यता शुल्क १५१) रुपए हैं।
- ६—आजीवन सदस्यों की नामावली वर्षमें एक बार प्रकाशित की जाती है।
- ७—“परमानन्द संदेश” प्रति मासकी पहली दूसरी तारीख तक प्रकाशित हो जाता है।
- ८—परमानन्द संदेश प्रतिमास सावधानीके साथ जाँच कर भेजा जाता है। १५ तारीख तक न मिलने पर अपने पोस्ट आफिससे लिखित उत्तर प्राप्त कर कार्यालयमें भेजनेकी कृपा करें। पोस्ट आफिससे पूछताछ की जायगी और प्राप्य होने पर सेवामें पुनः अंक भेजकर आपको सन्तुष्ट किया जायगा।
- ९—प्रतिवर्ष २६ अक्टूबर तक जिन सदस्योंका चन्दा मनीआर्डर द्वारा आ जाता है उनको छोड़कर शेष सभी सदस्योंकी सेवामें नये वर्षका विशेषांक वी० पी० द्वारा भेजा जाता है।
- १०—प्रत्येक सदस्यको वार्षिक चन्दाके अतिरिक्त ५० नया पैसा रजिस्ट्री डाक खर्चके लिए देना चाहिये।
- ११—५५० नये पैसे मनीआर्डर द्वारा भेजकर आप कभी भी ग्राहक बन सकते हैं। अथवा पत्र लिखकर वी० पी० द्वारा मंगा सकते हैं।

प्रचारकों की आवश्यकता है

भगवान् कृष्ण ने सद्ज्ञान के अर्जन, प्रकाशन एवं प्रचार-प्रसारको सर्व यज्ञों में

श्रेष्ठ ज्ञानयज्ञ कहा है।

“परमानन्द संदेश” रूपी ज्ञानयज्ञ में आपकी सेवाएँ आमन्त्रित हैं।

“परमानन्द संदेश” को देश-विदेशमें सर्वत्र घर-घर प्रचारित कर इसका सदस्य बनाने के लिए वैतनिक, अवैतनिक, अथवा कमीशन पर पवित्र विचारों वाले उत्साही प्रचारकों की आवश्यकता है। प्रति सदस्य एक रुपया कमीशन दिया जाता है। इच्छुक सज्जन सम्बन्ध स्थापित करें।

शारदा प्रतिष्ठान, सी० के० १५।५१ सुड़िया, बुलानाला, वाराणसी।

मुद्रक प्रकाशक—भद्रसेनवैद्य कल्पना प्रेस, वाराणसी।

कतिपय सम्मतियाँ

सम्पादक “कल्याण” गीताप्रेस, गोरखपुर ।

“परमानन्द संदेश” बहुत ही उपयोगी एवं कल्याणकारी पत्र है। इस प्रकार के आदर्श मासिक पत्रों का जितना ही अधिक प्रचार-प्रसार होगा, उतना ही पतनोन्मुख भारतीय जनसमाज का पतन रुकेगा और उसे उत्थान का पवित्र यथार्थ मार्ग दिखायी देगा। लेख चयन छपाई, सफाई, कागज मुखग्रष्ठ सभी सुन्दर और चित्ताकर्षक हैं। इसका आत्मपुराणों के विशेषांक बहुत ही सुन्दर तथा उपयोगी है। परमार्थ पथ के पथिकों के लिए इसमें विपुल सामग्री आ गई है। “परमानन्द संदेश” आध्यात्मिक पिपासुओं का बड़ा उपकार कर रहा है। इस पत्र के संचालक और सम्पादक महोदय वधाई के पात्र हैं। इस शुभ कार्य की मैं हृदय से सराहना करता हूँ।

हनुमान प्रसाद पोद्दार

सम्पादक “कल्याण”

“लोकालोक” मासिक दिल्ली

“परमानन्द संदेश” के तृतीय वर्ष का विशेषांक “आत्मपुराण” के रूप में निकला है। साहित्य भाषा के गरभीर ग्रन्थों को जनसाधारण हृदयङ्गम नहीं कर पाते। मुमुक्षु तथा आत्मतत्त्व के जिज्ञासु उपनिषदों के तत्त्व को सुगमता से समझ सकें इस दृष्टिसे प्रस्तुत विशेषांक बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। सरल सुबोध शैली में होने के कारण जन सामान्य को आत्म चिन्तन में सहायक होगा। गेटअप मेक अप सुन्दर है। अङ्क संग्रहणीय है।

शिक्षा निर्देशक उत्तर प्रदेश

आजकल के युग में जब भौतिकवाद की वृद्धि हो रही है, यह आवश्यक है कि हम आध्यात्मिक यथार्थताओं की ओर चेतना जागृत करें तथा तप और ऐश्वर्य, राग और विराग, योग और तितिक्षा के बीच उचित संतुलन बनायें रखें। वास्तविक आध्यात्मिक शक्ति संयम और संतुलन की देन है और जहाँ शक्तिका अखण्ड राज्य है वहाँ परमानन्द है। मैं आशा करता हूँ कि शारदा प्रतिष्ठान द्वारा प्रकाशित “परमानन्द संदेश” में आध्यात्मिक तत्त्वों की पूर्ण प्रतिष्ठा होगी। और उससे पाठकों को आत्म बल प्राप्त होगा। मैं इस सत्प्रयास की हृदय से सफलता चाहता हूँ।

च० चक्र०

शिक्षा निर्देशक उत्तर प्रदेश